

रत्नपाणिक्ता

उषाहरण-नाटिका

अथ मङ्गलश्लोकाः ।—

तत्र प्रथमं विनायकस्य :—

विघ्नं विनिष्कृज्य जामदग्न्यं प्रचण्डशुष्काभिक्षपाशतो यः ।
प्रगृह्य चिक्षेप गृहे स क्षीरेः पायादपायादनपायमूर्तिः ॥१॥

अथ विष्णोः :—

यो वैनतेयमधिरुह्य सुताघजाभ्याञ्ज्वरना सहस्रभुजलण्डनमुच्चकार ।
नागावरुद्धमनिरुद्धमरुद्धमण्डा सोऽश्वाद्धरि र्वरधरोऽयवलोऽष्टबाहुः ॥२॥

अथ शिवस्य :—

स्वयं भिक्षाचारी वितरणविधौ सर्वनिधिरो
विपादो निर्मृत्सु रविवरसताभोऽपि विह्वलिः ।
धिरक्तश्शक्तीशो विधुवलितभालोऽप्यतिलक—
श्चरित्रं चित्रं स प्रभवतु मुदे यस्य भवताम् ॥३॥

अथ भानोः :—

वृष्ट्या सृष्टिकरस्सहस्रकिरणक्ष्वक्षुर्जगत्यामसो
साक्षी रोगहरोऽपरः सुरवरो यस्यारुणः सारथिः ।
सस्ताम्भोधिधिलङ्घने पटुतरः कल्पान्तकारी विभू-
न्नित्यं सप्तसुसप्तियुक्तरथयुग्मभ्रमाय भूयादितः ॥४॥

अथ दुर्गायाः ।—

आविर्भूताऽत्र मायां व्रजमहितवधूसंविधाने निकामं
कंसध्वंसोक्तहेतुं विपुक्लिप्तपादाकोटरी या बभूव ।

याऽऽजी मध्वाविद्वेषप्रलयपरिकरी यादवीधप्रपूज्या
सा भाव्या नव्यभक्त्या भवविभवकरी शङ्करी शङ्कुरीषु ॥५॥

अथ श्रीमिविलेशस्य :—

दयालयो दानिषु कर्णजिता यो हृदयिहोऽभवतुप्रचेताः ।
धम्मवितारो धृतनीतिभारो वेदान्तसिद्धाऽन्तगृहीतसारः ॥६॥
तत्पुत्रो नृपतिलकः श्रीमाम्महेश्वरसिंह उदितकलः ।
विलसति यस्य चरित्रं स्वल्पे वयसि यथा हरितः ॥७॥
विनिधाय तथीयाज्ञामुषाहरणनाटिकाम् ।
कुर्वे सर्वमुद्देशगर्वी रत्नपाणिर्हं कृती ॥८॥

अथोषाहरणहेतुभूतं पद्यमाह :—

पूर्वं वृत्तमभूदितो हि सुमते तच्छ्रयतामद्भुतं
भक्त्याराधितशङ्करो बलितरो बाणाशुरो भाग्यतः ।
कस्मिन्निचिद्विद्यते सहस्रभुजभूच्छम्भोः सकाशाद्वरं
नाथ प्रायितवानितोह बलमूढोऽं जनो दीयताम् ॥९॥

तदुत्तरं शिववाक्यं पद्येन :—

मत्तोऽभूदयमित्यवेत्य गिरिषः प्रोचे बचस्तत्क्षणतः
केतुस्ते हि यदा पतिष्यति तदा बाणाशुरास्तत्पुरः ।
कण्टितस्त्रिजबाहुजा सहस्ररा तस्या निवृत्तिद्रुतं
वैश्वदेहि विवेहि तत्पुरगमं श्राव्या न भाव्या गतिः ॥१०॥

अथ नरयोद्योगः । नाग्यन्ते सूत्रधारः—'अलमतिविस्तरेण आर्ये ! इहामग्य-
ताम्' । प्रविश्य नदी सूत्रधारं प्रति वदति—आणवेदु [आज्ञापयतु] ।
सूत्रधारः—'आदिष्टोऽस्मि, तद्गीयताम्' । तत आह नदी—नटरागे,
शिखीद्वैद्यकं मङ्गलगीतं यथा :—

करं डामरं डिमं डिमिकं बजावधि, गावधि धूमि धूमि गोरिपती ।
भाल बालविधु सन्तत शोभित, तीनि नयन लस तीनि गती ॥

गीत सं०—१

भाल = कपार पर बालचन्द्र सचिखन । यती = यति, संन्यासी । लस =

जय शम्भु यती, जय शम्भु यती ॥
अपश्य नाच रचधि जयती ॥११॥
गङ्गा जटा बहु संग रंग कर चोदिस भू — परेत — पती ।
कटिलस नाग भूति तनु लेपित वसन अजिन उर मुण्डतली ॥
तहिखन सुन्दर पुरुषपुरन्दर, कहखत उमता शुभव मती ।
सुरमुनि आदि पार नहि पावधि, के नहि जगभरि करए नती ॥
रत्नपाणि मन आनि बसाओल, शम्भुसहित लस पारबती
चारि पदारथ वितरण पारथ, खे हर हरथि एक रती ॥१२॥

अथार्यायाः —

जय जय कंसविनाशिनी । जय यादवकुलवासिनी ॥
मत - जन - मङ्गलकारिणी । कण्ठाकरि अरि-दारिणी ॥
अतसीकुसुम - विकसिनी । कामदहन - परिहासिनी ॥
मदनतनय - परिपालिनी । समर सदा जयशालिनी ॥
तुअ माया अनपायिनी । तीनि भूवन गति दायिनी ॥
रत्नपाणि हृदि भायिनी । कष्ट मङ्गल रिपु शासिनी ॥१३॥

शोभए । वसन = मृगचर्मक वस्त्र । उर = छाती पर मुण्डक पंती । पुरुषपुरन्दर
= श्रेष्ठपुरुष । उमत = उन्मत्त । नती = प्रणाम ।

गीत सं०—२

नतजन = प्रणत लोक । अतसी = तीसीक फूल । कामदहन = महादेव ।
मदनतनय = अनिरुद्ध ।

अरिदारिणी = शत्रुनाशिनी । अतसी = तीसीक फूलक सदृश । कामदहन
= महादेवक परिहास कयनिहारि । मदनतनय = अनिरुद्ध । अनपायिनी =
अविनाशिनी ॥

अथात्र नाटिकायां कस्य कस्य प्रवेश इत्याह पद्येन :—

शम्भोराद्ये ससूनोः प्रमथगणवत्, शैलजायाः प्रवेशः,
पद्माब्जबाणात्मजाया अतनुतनुभुवश्चित्रलेखाभिधायः ।
सूनोरभोजयोनेरमितबलजुषः साङ्गबाणासुरस्य
साध्व्यस्यायोऽयकानां हलबलितमनोजातदेव्याचरीणाम् ॥११॥

अथ शिवप्रवेशगीतम् :—

विश्विवश एक दिन शिव मन भेल । क्रीड़ा करिअ सगण वन गेल ।
प्रथम आदि अनुचर सब सङ्ग । गिरिजा सङ्ग कएल हर रङ्ग ।
कि कहव तखनुक रासक रीति । देव चरित थिक तेहि परतीति ।
सुर मुनि नर पशु सब एक जाति । दम्पति भए रति कर एक भाति ।
कि कहव तखनुक शिवक विलास । छुटि गेल वन भए गेल केलस ।
ताहि समय ऊषा मन लाए । पहुँचलि सङ्ग सखी मिलि घाए ।
बाणयुता अनुपम रुचि देह । त्रिभवन सुन्दरि कनकक रेह ।
देखि देखि सवहिक अनुपम केलि । यौवनवश आकुलि भए गेलि ।
काम कलपतरु मन गहि सुरत । कोन दिन हमर मनोरथ पुरत ।
से बुझि गिरिजा शम्भक नारि । कहल उपासै सदस विचारि ।
माधव धवल दोआदशि पाए । सपन अपन पति मिलतहु जाए ।
से सुनि उषा हरषमय भेलि । सखीसहित शोणितपुर गेलि ।
गिरिजा गिरिश कएल कत रास । पहुँचल जाए तखन केलस ।
रत्नपाणि भन पहिल प्रबन्ध । आनु कहव गए कति विध वन्ध ॥३॥

अतः परं कि जात, तत्र दोहा :—

वितल बहुत दिन अवधि सह, उपगत माधव मास ।
आज दोआदशि निशि सपन, गिरिजा पुरत आस ॥१॥

गीत सं०—१

रुचि=कान्ति । कनकक रेह=सोनक रेखा । सदस=एकान्तमे । माधव
धवल=वैशाख शुक्ल ।

तखन 'सौमविच यामिनी, ऊषा सुतलिह जाए ।
कोटि कामदुति जतिरसिक, कैओ जन पहुँचल घाए ॥२॥
रङ्ग रमस सब भय वितल, ऊषा उठलि चेहाए ।
निया सपन नहि कैओ पुरुष, देखल सङ्ग सहाय ॥३॥
मोहि दूषित कए गेल जन, कि कहव काहि बनाए ।
कोन गति भेटत से रसिक, तादृश रचिअ उपाय ॥४॥
विरह बेआकुलि क्षणिक रति, जागर बिछरल नाह ।
परम गुप्त नहि बेकत कए, ऊषा पड़लि अघाह ॥५॥
सुमरि सुमरि पहुँ सकलगुण, कोशिल—कल—संलाप ।
ए निर्धि विधि हरिलेल पुनु, अन्तर करधि विलाप ॥६॥
जत जत अछि पारिवारिका, ताहि कैओ न गेआनि ।
कहव काहिसँ सपन गति, के केरि मिलति 'सेआनि ॥७॥
अधिक 'पुराकृत पुण्यतह, गौरि कएल वरदान ।
अचल विचल तहि जानि मन, तयु अव करिअ बयान ॥८॥

अथातः परमुषा निर्दोषा दोषाकरमुखी विदुषी विधितरहस्यां वयस्याञ्चित्र-
लेखापाहूय स्वाप्लिकोदन्तसन्तानं हस्ताऽमिषं वभाषे । पद्मवरा नटी
प्रकटयति तद्भूतं सुरगिरा गीतेन गुरुजरीरामे :—

जीवनं मम रक्ष रक्ष न चाप्यथा विलपामि ।
कस्मैत्य विधाय सङ्गमिती गतो हि वदामि ॥
शिव शिव !! हुना विधितया नता साऽशरणेव ॥१॥ वम् ।
दग्धमेव शरीरमिच्छमवेहि तद्विरहेण ॥
आलि ! कि मम तं विना सुवमा-समृद्धि-भरेण ॥

१—कोटा । यामिनी=राति । दुति=कान्ति ।

२—सेआनि=सजानो ।

३—पुराकृत=पूर्वक कएल । बयान (विदेशीशब्द)=व्याख्यान, सविस्तर
कथन ।

त्वं विघेरनि सृष्टिहृद् वि तल्लिखांशु करेण ।
 पट्टके विवृधाधिविघ्नहमारेण चरेण ॥
 वर्तते मनसीह मे रसिको यदा नयनेन ।
 तं विलोक्य वदामि हेमखि ! नाम्बधा नयनेन ॥
 दूषिताऽहमेनेन चेतिह मैतरं कलयामि ।
 धर्ममंती मम रक्षणञ्च यथातथा हि लपामि ॥
 किकरीवत् ते भवामि चरामि शक्तिभरेण ।
 तावदेव ममाखिलं सखि जीवनं रमणेन ॥
 एवं सखीजनतावराऽमि नता च सर्वजनेन ।
 जीवनं मम ते करे सखि किं तदा कवनेन ॥
 रत्नपाणिमवेहि तं रसिकं गुणप्रकरेण ।
 धोडशान्दवयोगत खलु मोहनं परमेण ॥४॥

—अष्टादशमिदम् ।

अथोपाऽऽकाशवाक्यं निशम्य चित्रलेखा विशेषादरादाह पद्याभ्याम् :—

लिखन्तु पान्तु वा प्राणास्तव कार्यामुरोधतः ।
 आशाक्षशाऽनपान्तेषां विद्धि मां किङ्करीमिव ॥१२॥
 लिखन्ते प्राणिनस्सर्वे मया पट्टेऽगुरुपतः ।
 दृश्यतां सर्वचिह्नेन तेषु को रतितस्करः ॥१३॥

अथ सर्वेषामग्रमाशयः । म च भाषाणीतेन लिख्यते :—

माघवशुक्ल तीथि द्वादशि धिक ऊषा से मन लाए ।
 गौरी वर-निधि बूझि सौधबिच, एकसरि सुतलिह जाए ॥
 कोटिकाम-दुति युवा रसिक जनः उषा सेजपर आए ।
 रङ्गरभस कत भेल सपन बिच, ऊषा उठलि चेहाए ॥
 जागर नागर क्यो नहि देखल, तखन कएल मन खेद ।
 काहि कहव तव सपन-चरित जत, क्रिया सख नहि भेद ॥

गीत सं० ५—माघव=वैशाख । सौध=कोठा । दुति=चमक । जागर=

असमय समय रमित भए नागर, मोहि दूषित कए गेल ।
 काहि कहव हम विरह बैआकुलि, विधि सुख दए हरि लेल ॥
 गुप्त कथा हम कहव काहिये, कहइत होअ अतिनाज ।
 गौरि देल घर गुप्त न राखिअ, बेकत करिअ हम आज ॥
 कहल सान-गति चित्रलेखार्ये, जानि गखी निज प्राण ।
 विपति अथाह पड़ल छथि मानस, तुअ बिनु के कर बाण ॥
 सुनि तभ चित्रलेखा एह भाखल कहिअ सखी मन चाह ।
 हमर जयविविज आन तरह नहि, केहन देखल धनि नाह ॥
 तखन विचारि बहल ताणामुर—तनवा जत जत भेल ।
 आन तरह नहि बुझव रसिकजन दए विधि निधि हरि लेल ॥
 विधितह चरित अधिक तुअ हेमखि, के नहि अग भार जान ।
 तीनि भुवन जन लिखत सहज तुअ, कर वर पट्ट समान ॥
 की हम कहव कहव सुदिनि भए, करव सकल तुअ काज ।
 गुरगुर हमर तोहर कर हेमखि, तकर मोहि नहि लाज ॥
 विरह-दवाकुल मोर जिव चातक, रहए न पल एक भीर ।
 तुअ वश हमर रसिक अवलोकन, से मोहि स्वातिक नीर ॥
 तन्हि बिनु विफल हमर सुखमा तनु, धन जन राज समाज ।
 राखु राखु मोर जीवन हेमखि, पट्ट वरशन दए आज ॥
 उषा विचलमन बैलि दवामय, चित्रलेखा भए गेल ।
 कहल उपास दीअ प्राण जग, होएत फेर तोहि केल ॥
 आनक अवस एक तुअ वश हम, सुदिनि आनव मोहि ।
 लिखव पट्ट हम ताहि देखव पट्ट, कि कहव सहचरि तोहि ॥
 रत्नपाणि भन मन गुनि हेमखि, गौरि कएल वरदान ।
 पुरत मनोरथ निवचय जानव, एहि तरह नहि जान ॥

जनल पर । नागर=चतुर प्रेमी । सख=सक, करवा योग्य । तरह=प्रकार । सुदिनि=सेविका, भनसिया । गुरगुर=बहस्पति । विरह-दवा-कुल=विरह-रूपी वाचानल से व्याकुल हमर प्राणरूपी चकवा पक्षी, ई पक्षी स्वाधी नक्षत्रक मेधक बूँदयें वृष्ट होइछ, से जल हमरा लेल प्रियदर्शने धिक । सुपमा=परम सोभावय ।

अथ चित्रलेखा पट्टं लिखेत् । भाषया दण्डकच्छन्दः—

लिखल तहिलन चित्रलेखा जगत सवहिक गंश ।
सभ नकारल तवन देखल अतए जनमल कंश ॥
देखि यदुवरगंश हरणित तवए कृष्ण अनूप ।
तन्हिक बालक कुलक पालक मदनतनु अनुप ॥
मदन-बालक जखन देखल कहल मन गुनि, "आलि" ।
पुरुष-पारथ देखि कृतार्थ भेलहु सभ गुनशालि ॥
हमर मानस हिनक वश भेल तेहन होअ उपाय ।
पहुसमागम देखि जागर-समय मीलिय घाय ॥
हमर मन अलि एहन व्याकुल कहव को सखि तोहि ।
आज नहि यदुराज आओव सखन की जग मोहि ॥
तोहर चित्र चरित्र विधि तह के न जग भरि जान ।
हमर प्राणक प्राण तुअ कर कहव को सखि आन ॥
रत्नपाणि समान यदुवर मिलव निशि मोहि आज ।
तखन जानव हमर जीवन सफल सभ मनकाज ॥६॥

अथातः परमुषाविलापसाकथं चित्रलेखा वदतिहम्—

"हे सखि प्राणप्रलभे ! अवयुक्तमिदमसाध्यं प्रतिभाति । यतः सिन्धु-
तीरे विनाशा वायोरेख्यगम्यायां द्वारकानगर्या प्रचण्डमार्त्तण्डालप्रतापो
जिताखण्डलो महीमण्डले सपरिवारः श्रीकृष्णो वसति । तस्य जूनेऽऽटम-
खण्डेऽन्तिमशिते धाम्नि बहुवर्षस्य रहस्यादिकं कुर्वन्ननिश्चस्तत्रप्ता नृत्यादि-
कमवलोकयन् गोलोकं इव विहरति । तत्रावलावलाबलाहं, हे सखि !,
कथं मच्छामि ।"

इतिमुखा हताशा बाणपुत्री जगादः—

"हे सखि ! त्वमप्येवं वदसि ? त्वदन्या का मम सहायभूता ? न कापि !
तहि तव पुरस्तादेवाहं प्राणास्तिक्षयामि ।"

गीतसं०—६

नकारल="नहि" कहल । मदनतनु=कामदेवक देश सन । बाण=
रक्षा ॥

इत्युषावचो निशम्य सदया चित्रलेखाऽऽहः—

"हे सखि ! मा जहोहि प्राणान् । तवार्थं महं व्रजामि । परंतु मदनन
शृणु ।"

अथ दोहाः—

तोहर मनोरथ बुझि सखि, गौरि कएल वरदान ।
अनल घीत चल अचल भव, एहि तरह नहि आन ॥६॥
न कर मलिन मन हे मखी, सुमरि गौरिपदकञ्ज ।
स्वरित समीहित सिद्ध भए, भेटत मानस रञ्ज ॥७॥
जखन जखन सखि देवगण, पाशोल विधिवश खेद ।
तखन कुपाकए पाङ्करी, कएल सकल दुख-खेद ॥८॥
जननि-चरण हिअ राखि हम, जाएव माधवगेह ।
प्राण-बाण मोहि नहि सुखद, कारण सखि तुअ नेह ॥९॥

अथ चित्रलेखोषाविलापनिशम्य भाषागीतेनोत्तरमाहः—

सदचरि तोहर वचन राम सुनि । क्षुब्ध^१ हमर मन धनि सभ गूनि ॥
सिन्धुतीर अलि माधव भवन । अगणित योजन कठिनहि गमन ॥
जे नहि भए सक तस तुअ चाह । कोन गति मदनतनय तुअ नाह ॥
जगतविदित माधव शुभधाम । सभ गुण भरल द्वारका नाम ॥
रवि विधु पवन हुकुम लए जाए । के धिक आन लाल अकुलाए ॥
रक्षक-वन्द भरल सभ ठाम । बिना हुकुम नहि मानए साम ॥
आठम खण्ड रहि अनिरुद्ध । हमर मन धनि परम विरुद्ध ॥
हम अवला जाएव कोन भाति । सावधान सभ रह दिन-राति ॥
रत्नपाणि भन होएत उपाय । हिअ धर माधव जगत-सहाय ॥१०॥
एतदुत्तरमाह भाषागीतेनोषा । दण्डकच्छन्दः—

मखी-माधव मनल उषा परम आकुलि भेलि ।

आन-के मोहि हीत तुअ राम करव की हम केलि ॥

१—अनल=आगि लीलत भए जाएत । समीहित=अभीष्ट । रञ्ज=खेद ।
माधवगेह=कृष्णक घर ।

२—क्षुब्ध=क्षुब्ध, आक्षेपित । मदनतनय=अनिरुद्ध ।

आव की हम प्राण राखव मिलव नहि पहु आज ।
 देव-वञ्चित भेलहुँ हे सखि तखन की घनि लाज ॥
 बाणतनया प्राण तेजव तेहन निश्चय भेल ।
 बूझि से मन चित्रलेखा अवन प्राणद देल ॥
 एखन अनु सखि प्राण तेजहु तमर यावत प्राण ।
 गौरि तोहि बर देल सहचरि होएत निश्चय बाण ॥
 सुगरि दुर्गाचरण-सारम भजिअ मानस लाए ।
 पुरत हे सखि कामना तुअ गौरि भक्त सहाए ॥
 देवतासभ विपति पड़ि गेल तखन कएल विचार ।
 भजिअ सभ मिलि देखि दुर्गा जान माह परकार ॥
 तखन सरसरितीर गएवहु सखि अराधन भेल ।
 छुटल सभ दुख मोदमय भए भवन निज सभ गेल ॥
 एहि उत्तर चित्रलेखा कएल दुर्गाभक्ति ।
 भगनबाणी तखन भए गेल काजसाधनशक्ति ॥
 रत्नपाणि विचारि भाखि मुनिअ देवि विचार ।
 सतत दुर्गाचरण सेविअ आन नहि परकार ॥१॥

अथ चित्रलेखा दुर्गा स्तोति पद्येन :-

जय जयकारिनि भव-भव-हृदरिनि, गिरिश-विहारिनि, शैलसुते ।
 महिषासुरमर्दिनि, ललितकपदिनि रणभूमि नहिनि धोरएते ॥
 निगमागमसारे, मणिमयहारै, महिषापारे, सर्वनुते ।
 सकलेश्वर कामं जननि निकामं पदमभिरामं तोमि गते ॥२॥
 अथ स्तुतपत्रमाकाशवाणी बभूव, "एच्छ, आर्ये ! कार्येण्डिद्रुतं भवि-
 श्यती" -ति निशम्य चित्रलेखा गुप्तधेया द्वारकामभित्तलिता । मनोजवा
 सा सिन्धुतीरमगमत् । अत्र भाषायीतम्—

चित्रलेखा चललि मन गए गौरि-पद-गुण-कञ्ज ।

गुप्ततनु मन-वेग-सम-गति समय शुभ भयभञ्ज ॥

१—गुप्ततनु—गुप्त देह कए । अमरावती—इन्द्रपुरी ।

घाए जाए समीप सिन्धुक देखल भाषव-धाम ।
 छंणि जनि अमरावती लस द्वारका जय नाम ॥
 सिन्धुतीर सधीर-मानस ठाड़ नारद-कृषि ।
 सतत भगवत-चरण-सेवक माडि औवधि भीखि ॥
 भावि बुझि छुपि आवि कोदहु ओतए दर्शन देल ।
 कहत के किअ भावि भेलहि तेहन घटता भेल ॥
 रत्नपाणि विचारि भाखि करहु अनु घनि लेख ।
 गौरि-वर धिक अचल भव भरि ताहि पड़त न भेद ॥१०॥

अथ कीदृशं नारदं चित्रलेखा दृष्टवती तत्र भाषया नीतम् । बराहोदाराय :-

१यामिनि कामिनि देखल सिन्धु । एकसरि आन केओ नहि बन्धु ।
 ततए देखल घनि नारद-कृषि । हरि-सेवक जीवधि कर भीखि ।
 अर्जुन वसन निलक उपवीन । हरि-पद-ध्यान करधि दिन नौत ।
 दीपित देह तपनसम भाय । समन जनिह सम धरणि-अकाम ।
 सुननु विभूति कमण्डलु धारि । पाकल केश वयस गुणचारि ।
 विधिमुत यतिवर निरिधक बन्धु । सभगुण अनुपम कलहक सिन्धु ।
 रत्नपाणि मुनि दर्शन देल । पुरत मनोरथ से मन भेल ॥११॥

तत्र चित्रलेखा दृष्ट्वा मुनिराह - "अये का त्वमेतादृशान्धतमसे उद्दिग्मचितोव
 समागताऽसि ।" इति निशम्य सा मुनि प्रणम्याह, - "जगज्जनीन ! हरि-
 भावतलीन ! देवर्षे ! नारदमुने ! चित्रलेखाभिधाऽहमपरास्तेव किङ्करी
 भवामि । यदर्थमागताऽस्मि तद्ब्रुवामि"—

अत्रकीहा—

पुरुष चरित जत भए बितल मुनिस कहल बुझाए ।
 मुनि मुनि हवित चरित सभ विग्रह पड़ल लजाए ॥१२॥

२—यामिनि=रातिमे । कामिनि=गुन्दरी । अर्जुनवसन=अजगर वस्त्र ।
 तपन=सूर्य । निरिधक=शिवक ।

अथ मुनिराह दोहा—

कठिन गमन बिच द्वारका सभतस रक्षकवृन्द ।
बिनु परिपक्व^१ न सञ्चरह^२ भाविनि पड़वह फन्द ॥ २॥
पारिजात - तरु - हरण - रण - समय पराजय पाए ।
बुझल हन्त्र जग से सबल यदुपति जाहि सहाय ॥ ३॥
सम्प्रति बाणासुर सबल गौरीवर - वर पाए ।
हरि - बाणासुर - समर हम भावी देखव आए ॥ ११॥

अथाथ भाषागीतम्—

एतेक राति अतिअन्धसमस बिच आईलि छह एहिठाम ।
आकुल - बिच तोहर बुझला पड़ भिकिह केअ किअ नाम ॥
पुरुष चरित सभ कहल मूनिसँ तखन कहल निज नाम ।
मुअ पद - कमल - सुगल अवलोकल आब पुरत मनकाम ॥
सकल कथा सुनि मत मुनि नारद उचार कहल बुझाए ।
की बुझि तोह द्वारका चललिह के सोहि देलक मुझाए ॥
तोहँ अबला असहाय तखन केरि जएवह कृष्णक घाम ।
बायु गमन बिनु हुकुम जतए नहि रक्षक रह सभठाम ॥
सुरतहरण पराजय हन्त्रक तखन सबल के जान ।
तन्हिक आगु बाणासुर के थिक जँ पओलक वरदान ॥
नारदवचन सुनल धनि मन दए तखन कएल बड़ खेद ।
की हम करव कहव की सखिसँ नहि जानल हम भेद ॥
रत्नपाणि भन करिअ समत मत न करिअ आशा - मंग ।
गौरिक वर नहि चलए जगत भवि आगु देखव गए रङ्ग ॥ १२॥

अथ नारद प्रति चित्रलेखा विजयिञ्जलयति भाषागीतेन—

सुनिअ सुमन भए हे हे गोचर मन लाई ।
सदय - हृदय भए हे हे मुनि होइ सहायी ॥

१—युक्ति । २—प्रवेश करह ।

पुरिअ मनोरथ हे हे शरणागत जानी ।
भअब हृदय भए हे हे जानव सत बानी ॥
कएल चरित हठ हे हे नहि सुझल बोवे ।
करिअ रोष जनु हे हे राखिअ सुनि तोषे ॥
बाणासुर मोहि हे हे मुनि प्राणसमाने ।
करिअ तेहन मति हे हे तसु राख पराने ॥
माधव - सुत - सत हे हे अनिरुद्ध बलाने ।
करिअ हमर वश हे हे फल जीवक दाने ॥
रत्नपाणि भन हे हे धनिसुनु चित लाई ।
तोहर विनय सुनि हे हे मुनि होएव सहायी ॥ १३॥

अथ चित्रलेखा सविनयगीत श्रुत्वा सकलणो नारदो गीतमाह भाषया—

सुनु सुनु भाविनि न करिअ खेद । हमर वचन मन मानव बेश ॥
तामसि विद्या लएकहु जाह । छूटत तोरित तोहि विपति अथाह ॥
तोहि सभ सुझत जत जग लोक । तोहि नहि देखत न करिअ शोक ॥
तोहर दयावश कहल उपाय । हरि धरि मानव पहुँचह घाए ॥
हरि अनिरुद्ध गुप्त लए जाइ । काजसिद्धि धनि जगत सराह ॥
गुप्त रहन नहि परगट जान । हरि बाणासुर - समर निदान ॥
आओव हमहु देखवअनि युद्ध । सुनु धनि जखन लड़त अनिरुद्ध ॥
सुनि मुनिवचन कएल परनाम । पहुँचल जाए बीच हरिघाम ॥
आठम खण्ड जतए अनिरुद्ध । रक्षकसँ सभतस अथरुद्ध ॥
ततए देखल गए कतिविध नाच । मुनिहुक धर्म जतय नहि बाँच ॥
कथक आदि सभ गीत जलाप । तन्मय जत छल लोक कलाप ॥
अनुपम देखल रतिसुतधाम^१ । तीनि भवन राजित जसु नाम ॥
कतिविध सखा करए कत हास । ततए कामसुत^२ करए विलास ॥
तेहन अवस्था देखिकहु गेलि । हरि अनिरुद्ध हरखमय भेलि ॥

१—अनिरुद्धक घर । २—अनिरुद्ध ।

आए गगन-पथ रतिसुत-अङ्ग । कएल परस्पर कथन निशङ्क ॥
लए गेल पलहि उपा-रति-नेह । कहल समुझि लख पति अति नेह ॥
रत्नपाणि भन कि कहब चरित । हरि-कहना भए गेल अति स्वरित ॥

अथ चित्रलेखा बाणसुता प्रत्याह पद्येन—

गूहाण रतितस्करं मदन - कोटि - शोभाकरं,
मनोभव - सुतं नुतं कमलभू - मनो - निर्मितम् ।
रसायनमनालसं कलितसाहसं निभंभयं,
विशोहि रतिसङ्गरं रहसि माधवे माधवे ॥१४॥

अस्याशयो भाषागीतेन लिख्यते यथा—

मदन-तनय तुअ हरिकहु देल । तामसि विशाबलसँ भेल ॥
सखि हे समुझि लीअ रति-बोर । साहस सकल भेल सभ मोर ॥
देख रतीपति-घात^१ सग खर । हरि-मुन-सुत^२ धनि जगत अनूप ॥
विधि रचना मानस जनि कएल । सार बनाए पड़िल छल धएल ॥
सभगुण आगर नागर तोहि । रेल बिधाता त्रिभुवन जोहि ॥
काम-कलाकोविद तुअ नाह । निभंभय साहसि रस-भर चाह ॥
रत्नपाणि भन मन गुनि आज । चलव समारि निवाहव लाज ॥१५॥

अथोषाह पद्यम्—

सन्ध्यासि त्वं वयस्येऽविदितगतितयाऽसाध्यकर्मप्रवीणा,
मरप्राणत्राणकत्री हरिसदनगतानङ्गतामुदगत । सा ।
तामस्या विशायाऽहोऽगणितहरिदराऽनङ्गपुनं कहर्षी
कि वक्तव्यं तवाग्रे स्वदुपकृतवशा शुकदासी सदाहम् ॥१६॥

अस्य भावो भाषागीतेन—

तो हे धन्या धनि त्रिभुवन एक । तुअ करणातह निबहल टेक ॥
अविदिनहूबव हरिक गह जाए । हरिसुत सुत हरि आनल धाए ॥

१—सैकड़ो कामदेवक समान । २—कृष्णक पुत्रक पुत्र ।

सहस एहन करत के आन । हमर बचाओल सहचरि प्राण ॥
ताममिविद्या मुनिसँ जाए । कएल सिद्ध सभ मानस लाए ॥
तुअ उपकार कहब कत आज । हम तुअ सुदिन^३ ताहि नहि ब्याज ॥
रत्नपाणि भन तहिन नेह । न मुनिअ प्राण बाण निज देह ॥१६॥

अथ सर्वज्ञा ज्ञातगर्वी विदितरहस्या वयस्या बहिष्पगत्य विविशुः । अथ रहसि
बणात्मजोक्तं भाषया गीतमनिरुद्धं प्रति—

कि कहब यादव तोही । दए सुख आदि अत निरमोही ।
तुअ विरहानल-दावे^४ । नीरम दाह^५ अनल तनु तापे ।
विविधस तुअ पुनु सङ्गे । पुरत मनोरथ समित अनङ्गे ।
संशय पड़ल पराये । पहु तोहि देखि देखि भेल मोर बापे ।
रत्नपाणि पहु लाई । विधि रचना फेरि देल तुलाई ॥१७॥

अथोषा प्रत्यनिरुद्धो भाषागीतमाह—

कि कहब कामिनि आज । सपन अपन गति कहइत लाजे ॥
न बुझल अन्तरलीने । जागर धनि तुअ भेलहु अधीने ॥
जतहि मानस मोही । असह विरह देल कि कहब तोही ॥
सपन देखल तुअ कये । एहुखन देखिअ कला अनूपे ॥
आब उचित रति-सारे । करिअ कमल-मुखि प्रेम-पसारे ॥
कए गन्धर्व-विवाहे । पुरजो मनोरथ अपनिअ हारे ॥
रत्नपाणि भन धीरे । रमिअ बुझ मिलि कए मन धीरे ॥१८॥

ततः कामशास्त्रकलाकोविदोऽनिरुद्धो गान्धर्वं विवाह विधाय सुपमावधिभूतया
बाणसुतया रेमे । अथ रतिसमयस्य गीतं भाषया । दण्डकच्छन्दः—

तखन दम्पति बसन फेरल, हार कएलहि दूर ।
अङ्ग अङ्ग अनङ्ग मुखमय भेल मानस पुर ॥

३—सुदिनि, पाषिका ।

४—विरहली आगिक ज्वाला सँ । ५—सुखाल काठ जकी आगि देहके जरबैछ ।

सुरति रति विपरीत कएविध, कएल गुण दू गवध ।
अमृत सुखमय भेल तनमय दूद लोचन अन्ध ॥
तखन देखल सतनु अतितनु कएल मानस चेत ।
मधुर मधु पिबि आगु ताकल फेरि के सुख देत ॥
रतिक सङ्गर भङ्ग कएलन्हि मधुर लावल बोल ।
तखन बिधु-मुक्ति बिहूँसि बाजलि एकक बोल अमोल ॥
रत्नपाणि विचारि भाखि कएल समुचित काज ।
चलव आव समाधि दम्पति सभ बचावए लाज ॥१९॥

अथ रतिसुखानन्तर मदनतनयो वसन्तवर्णनं भाषागीतेन करोति । यथा—
देख देख भाविनि सरस वसन्त । बड़ तसु भाग निबर^१ जसु कन्त ॥
^२परिमल मन्दर मलय समोर । चलए न पाड़ भार गति धोर ॥
कोकिल कलरव पञ्चम राग । उचित समय धनि अति अनुराग ॥
जगमग यामिनि चान विकास । विधिवश दम्पति करए विलास ॥
तह तह मधु पिब मधुकर-पुञ्ज । भमए रमए धनि कुसुमित कुञ्ज ॥
देखु सरोवर सारस सोभ । कि कहव देखि होअ निधुवन^३-लोभ ॥
नागर नागरि समुचित पाए । लाख रमित नहि रतिक अघाए ॥
रत्नपाणि हरि उपगत जाहि । सभ सुख जानब समुचित ताहि ॥२०॥

अथ पुष्पवाटिकां दृष्ट्वा पुनराह गीतं भाषया—

कतहु बेलि चमेलि किशुक वकुल चम्पक शोभही ।
मदन बकहूल कनक पाड़रि ततए रम अलि लोभही ॥
सरल शाल तमाल कुंकुम कुमुद लस करबीरही ।
कहव कत हम कुसुम कतविध देखि नहि रह धीरही ॥
देखु उपवन परम शोभित कोकिला कल गायही ।
चलिअ कामिनि काम कोणुक करिअ मानस भावही ॥

बहए मारत मलय-सम्भव कुसुम-सौरभ संगही ।
कुञ्ज गुञ्जत पुञ्ज मधुकर उषु काम तरंगही ॥
चमक चानक चाननी निस रमए युव-जन भावही ।
^१मकरकेतुक हेतु निधुवन^२ दीस मानस धावही ॥
देखि तुअ तनु अनुप सोभा धीर नहि रह आजही ।
रमय सन्त वसन्त^३तुवस कतए निबहए लाजही ॥
रत्नपाणि रमेश कामद तखन जीवन सारही ।
हास कइ परपास आनन दूर कइ हिय हारही ॥२१॥

अथ रत्युत्कटेचमवेक्ष्य हृच्छयवशादनिरुद्ध प्रति बाणजा तदुत्तरमाह भाषागीतेन—

तोहि हम पाओल विधिवश कन्त । जानब बाजम सतत वसन्त ॥
अति नहि चाहिय पहु सभ काज । धरज धरिअ निबाहिय लाज ॥
तनु अति तनुक अतनु तनु जोर । तुअ सङ्ग पाए छुटल दुख मोर ॥
त्वरित उचित नहि निधुवन चाह । के अग मर्दित कुसुम सराह ॥
घेरज धरिअ करिअ नहि रोष । दम्पति जानब एक मति तोष ॥
देखिअ जखन जेह जसु रीति । तेहन करिअ पुनु निबहए प्रीति ॥
मानिअ भर कहल मन लाए । सदाय हृदय भए रहिय सहाय ॥
रत्नपाणि भन मन अवचारि । करए काज बुध समय विचारि ॥२२॥

अथ निश्रातुराणां यथा न शरयाभूमिविचारस्तथा कामातुराणां न समयविचार इति समीक्ष्य बाणपुत्रा मानसकारि । तद्विषये शोभा—

रति लोनुप पहु देखिकहु तखन कएल धनि मान ।
^१आरत लोचन मोन गहि बंसलि विमुखि निदान ॥१७॥
तेहन तरह देखि रति-तनय^२ अति आकुल मन भेल ।
^३दृष्टिकूट-तनु गीत कहि मान-दोष हरि लेल ॥१८॥

अथ मानमञ्जन-ज्ञीवमाह—

उचित तोरित^४ रसधाने ।

असमय समय मान नहि चाहिअ विकल करए पचवाने^५ ॥

१विनु कर मधुकर पान यतनपर दए हनु रजनि^६ बिहाने ।

२तन अरि ता अरि भवन सुतानन से किअ करहु मलाने ॥

३खग पति पति सुत अरि अरि सुन्दरि विधुहित^७ लोचन राजे ।

४१हरि हरि, हरि-सुत-तिअ १२ दिअ मानिनि ताहि न करिअ वेआजे १३ ॥

५गिरिधर अघर पयोधर भूषण तापर मोहिम हारे ।

जनि धर १४ शिखर उपर सँ लम्बित बिम्बित सुरसरि-धारे १५ ॥

६भगन गुणित कए आगमवश कए कामिनि बौल मोरा ।

रत्नपाणि भन तखन उचित कोन गिरि १६ सम गरुअ निहोरा ॥१७॥

अथ पश्यनुरागवशादुपा स्वयं गीतमाह—

तेजल मान हम तुअवश रे, न करिअ पहु रोये ।

प्राण-आण मोहि तुअ कर रे राखिअ परितोये ॥

कत हम देव अराधल रे, पुअिल फल मोही ।

आए तुलायल विधिबश रे, पति पाओल तोही ॥

करिअ काज पहु समुचित रे, नहि पाविअ लेदे ।

हमर कहल हिय राखव रे, जानव पुनु बेदे ॥

४—स्वरित, मट । ५—कामदेव । ६—हाथ-रहित भ्रमर । ७—रति
विताय भोर कव देख । ८—नालक शशु आगि, तकर शशु जल, तकर भवन
समुद्र, तकर सुत चन्द्रमा, तत्सवका आनन अर्थात् अपन चन्द्रमुख के ।

९—पक्षीक पति महद तनिक पति विष्णु तनिक सुत कामदेव, तनिक शशु
महादेव, तनिक शशु कामदेव, तत्सवका सुन्दरी । १०—चन्द्रक समान हितकारी
शीतल । ११—हाथ हाथ । १२—विष्णुक पुत्र कामदेव, तनिक स्त्री रति
अर्थात् समागम । १३—लाव । १४—पर्वत रूपी देहक उपरका भागक
शीर्ष, अथवा गिरिधर कृष्ण अर्थात्कारी स्तनक अग्रभाग ताहिसे नीचा
स्तनक गहना । १५—उपरका भाग । १६—रंगक धार । १७—आकाश
अर्थात् शून्य सँ गुणा कए हमर कोशल के शून्ये बुझ । १८—पर्वत सन भारी ।

रसमय समय पाए पुनु रे, कर पहु मुखसारे ।

सदय दूदय भए जानव रे, किछु करिअ बिचारे ॥

मदन-मनोरथ पूरल रे, बोलल अभिसारे ॥

विधिक चरित-गति के बुझ रे, जत प्रेम-पसारे ॥

रत्नपाणि भन मन मुनि रे, देखिअ हिय लाई ॥

कैहन असम्भव सम्भव रे, विधि देल तुलाई ॥२४॥

अथैतस्मिन्नेव समये बाणान्त-पुरे विचित्रचित्रादिमण्डिते कुमारीखण्डे उपाति-
रुद्धयोः परस्परं रसकषालापकलापं निशम्य रक्षावक्षा रक्षका राक्षसादयश्च-
कितचित्ता बभूवुः "आश्चर्यमाश्चर्यं कृतान्प्यपरिचितेन साकमालापकलापमुषा
करोति । गगनकुसुममिव प्रतिभाति" । ततो मनसीतिविचिन्त्य सगर्वाः
सर्वे ते बाणसमीपजङ्गमुः । अथ गश्वा ते तं जगवुः "हेदेव ! सुरगणैस्त्वर्चकार-
काखण्डप्रताप ! माण्डिसूते ! यशोजितराकारमणकीर्त्ते ! किं वदामो वयम् !
कुमारीखण्डे कोऽपि युवोपमा साकमालापकरोतीति निश्चित्य वयमागताः
स्मः । यथाज्ञा तथा कुर्मः ।" "रे पुयं किं वदथालीकम् ।" "प्रभो ! सत्य-
मेतत्" । "किमत्र मानम्" । "पुरुषबाणनुमानञ्च ।" "कोऽयमेत्यासाद्य-
कर्मकारोत् ? भवतु नाम कोऽपि । स आगतयो हतव्य एव । कोऽत्र
विचारः ।" अथेति प्रभोराज्ञां गरीयसीमवगत्य शस्त्रास्त्रधराः सर्वेऽनिरुद्ध-
निधने कृतनिगर्व्या अनिरुद्धसमीपमाजङ्गुः । ऊचरन्ति ते — "कस्त्वमनर्थक-
रिभवागतोऽसि । रे रतिचोर ! गतापुरिश्च प्रतिभाति । बहिरागच्छ ।
तव मुखं पश्यामः कीदृशोऽसीति ।" बाणासुरवधरक्षक-वचो निशम्य उपाऽश-
निपातमेवामन्यत । किञ्च तदतिस्म्य — "हा हतास्मि । हे विधे ! रंग एव
भंग-कृत" इत्युक्त्वाऽनिरुद्धं पचाभ्यामुपविशति । प्रथमं यथा—

एकस्वयं बाल एवाविधितरणगतिः का घृतिश्चे बलं वा,

किं शौर्यं बलभाजी स्वजनविरहितः किञ्च करिष्यस्यतायः ।

आहुता बाणदृतास्तव निधमपरा भूरि गर्जयस्यताय्यः,

किं कुर्वे हा हतास्मि त्वदरिचयलये जीवने जीवनं मे ॥१७॥

किञ्च,

का लज्जा भञ्जशय्या किमिह मम सुखं त्वां विना के च लोकाः,
शोकाकाराः समस्तास्तद्विह तव पुरस्त्वक्तजीवा भवामि ।
कस्तासः का च माता भवति कुलवपुनामये ! देवमेकम्,
स्वामी यो नस्तयोस्त्वं दिक्षति किल भवे कोपि नैतादृशोऽप्य ॥१८॥

अथ गीतञ्च—

अथ मोहि ज्ञायर सपने समान । तुअ विनु जीवन विपति-निदान ॥
अथ मोहि उचित अनल परवेश । पहुक आगु तिन बदलए वेश ॥
हमरहि चरित भेल एत दीप । की हम कहय तखन विविरीष ॥
कएल गुणत हम परगठ भेल । खैरज हमर सकल दूरि भेल ॥
गिरिजा - वरक धएल हम आस । क्षणहि पुरित भेल सकल विलास ॥
की बुझि राखव जिवक भरोस । लाखनि कोज भरल सभ रोस ॥
रस्तपणि हरि घर चित लाए । पुरव मनोरथ अपनहि आए ॥२१॥

अथ बहुतरुण्यो प्रति अनिरुद्ध आह पद्याभ्याम्—

कृष्णो देवि पितामहो नमः, पिता प्रद्युम्ननामा भवे,
मायावी बलभूत कृताजिनिबन्धो विरुदाततेजोभवः ।
कस्तासा निहताश्च बाल्यसमये ये वा रजोऽप्येऽमरा,
देवेशोऽपि जितो हितोऽपि कलहे भू-वारिजातागमे ॥१९॥

किञ्च,

सिंहादाप्तजनुर्न सीदति भवे वृद्धे विपानां त्रिवे !
खेदं मा कुरु वामि सङ्गरभवं नाहं जनः प्राकृतः ।
सङ्कष्टे समुवागते विधिवशाज्जानीहि तारागती,
ताकशीरोहणतत्परी मुहुरी कीऽयं हि वाणामूरः ॥२०॥

अथानिरुद्धो गीतमप्याह गृहीतोऽपि प्रति, यथा—

बाणसुता न करिअ मन प्रास । खैरज धरिअ पुरत सभ आस ॥

नारद मुनि बुझल सभ चरित । हरिरी आए कहय हुनि स्वरित ॥
हम गए लइव करव मन पुर । आहुत भए नेहि बलमए सूर ॥
मायाबुद्ध बुझल नहि नारि । ताहि कदाचित हमरो हारि ॥
विधिवश रोहन होएत जे बेर । कुण्यागमन तखन नहि बेरि ॥
अबितहि कुण करव परकार । निदय जानव हमर विचार ॥
गोहि जनु रोजिअ जाएव रङ्ग । स्वरित करव असुरक बल भङ्ग ॥
नए विरवास चलल अनिरुद्ध । दश गुण देह बहन जनि क्रुद्ध ॥
रत्नपाणि मन कुणक आस । तखन कहाँ जग ककरो आस ॥२६॥

अथ महाकाव्यो भूत्वा गृहीताशिरसनिपात इव निशाचरचमूचयेऽगतत् । अथ बोद्धाः—

कुण-चरण मन सारण कए, बल विष कएल प्रकाश ।
जनि कानन-विच देववश, उपगत प्रलय-दृताश ॥१९॥
देखितहि रिपुबल बकिता-चित, भयतह सकल वदाश ।
“दस्ताबल बलसिंह लखि, विचए बलक हरास” ॥२०॥
“एकत कविविध अरगमण, गरल बेशापित देह ।
“विनतागुल लखि वासवश, के न जाधि फणि नेह ? ॥२१॥
“असि-विद्युत-चय चमकि जनि, दशनन तनु भए गेल ।
“मुक्षित-लोचन असुर-जन, वास-हारा तनु भेल ॥२२॥
एहन पुरुष नहि वृद्धिपथ, अति साहस परधान ।
पवन समन नहि हुकुम विनु, ततए समामम खान ॥२३॥
सभ मिलि तसगत की करइ, करइ सबहु संग्राम ।
खतन गरज नहि अपन वश, बाँचव तेँ जग नाम ॥२४॥
एक कहाँ धरि वाचिकहु, पहुँचत नए निजधाम ।

१—आहुत (बजाओ) भेला पर वीर दिखव नहि करै छथि ।

२—आमि कहेल भेला पर दस गुना शरार धम लेल ।

३—लज्जालक जनि । ४—मत्ता हाथी । ५—ह्रस्व । ६—एकव कलेको विषमक सय । ७—मरु के देखि दरे । ८—तरवाररूपी विद्युतराशि चमकि छै । ९—असुरमण आनि मुलए गेल ।

तेहूँ मनोरथ जानि मन, आज उचित सभास ॥२३॥
बहुत भवेवण कए अमुर, लाखल सभ भिलि पुरख ॥
अति हरवित भए सुगति, समर कएल अनिरुद्ध ॥२४॥

अथ दण्डकचरितः—

तखन यमुनणि एहन भए गेल कलित—कोप कराल ॥
अमुर-जाल पतन-सम भए खसए दीप दिशाल ॥
बारि खर तरवारि कर बारि रिपुक अहन समारि ॥
काटि छट छट रिपुक मस्तक बाहि कृष्ण पुकारि ॥
अनेक छल रिपु खेत जूझल बाधि भेल मोट चारि ॥
तखन जाए पुकार कएलक अपन सवाहिक हारि ॥
“कहेव की हम बाण भूपति पुख रणविच आज ॥
परम सुंदर जितपुरन्दर ॥ वीर कर असि छाज ॥
अगहि रण विच अमुर जूझल ताहि भेल न देरि ॥
पुख एक अनेक जनि भए कएल अमुरक डेरि” ॥
दूत-वाचिक सुनि भूषति जोध-कलुषित भेल ॥
अपन राज सम्राज साजित रङ्ग-मधि चल भेल ॥
जाए नारद गगनपथ-गति देखए क्यो नाहि जान ॥
मदनगुल एक आवि देखाध करधि आशिपदान ॥
बाणभूषति सज्ज बहुबल रङ्ग जूझल देखि ॥
“जानमान विमानसँ नृप कहल वृत्त विशेष ॥
विबुध दानव दैत्य मानव कोन वंशक थीक ॥
रत्नपाणि विचारि देखिअ भए-रक्षण नीक ॥२५॥

अथ छन्दोऽन्तरेण बाणोक्तं गीतम्—

बीदिश दक्षक मानव भाक्षक कोटि कोटि रणवीर ॥
बाण दुहुम बिनु बह्वि न कहखन जे पुनु गलल समीर ॥

१—इन्द्र के जितनिहार । २—तरवारि । ३—युद्ध भूमि । ४—जानी कार्या-
धक्षक कायरथ, धीमान् (वीरविक) देवानजी ।

“परिखा तेहन जलधि-गम नीदिया नीदिया बरख हुतास ॥
आधि सकए नहि सकल सुरासुर सब जन मानसि चास ॥
ततए आधि लगमा दूषित कए पट्टिबल सङ्गर बीस ॥
करोक असुरबल कए साहसमय डाढ़ रुधिरस्य कीच ॥
आधिअ एहन नृपति-वल अतिबल देखि असह अपराध ॥
तखन एहन दुर्जन नहि राखिअ दिन दिन दोष अगाध ॥
तखन फेरि रण भेल बहुत बिघ नहि थाकधि सहवीर ॥
बाण अमुर मन भेल बेआकुल तहि रह मानस धीर ॥

देखि शिमान कहल “सुनिअ नृप कह माया-संश्राम ॥
तखन पराजित होएत वीर पुनु पुरत मानस-काम” ॥
कहल शिमान सुनल बाणासुर अन्तरहित ॥ भए गेल ॥
नामकास लए बहुपति बाम्बल तखन अवश भए गेल ॥
हरषित भेल तखन बाणासुर महल हाथ तछारि ॥
बधए चलल रतिपति-सुत ॥ तहिखन हटल शिमान निचारि ॥
“करिअ विचार थीक कोन वंशक निश्चय कए सभ बूझि ॥
जेहन उचित नृप तेहन करब पुनु हमरा षड्वल सुझि” ॥
समुचित कथा नृपक मन आएल वए रक्षक बीसीश ॥
ऊपा भरित चकित-मन भाखधि आकुल मन अति रीश ॥
ऊपा सुखाइलि तड़ित-रेह-नगु ॥ धुक धुक भीतर प्राण ॥
निज-पति-गति देखि परम बेआकुल हरि बिनु के कर प्राण ॥
एहन तरह देखि सबकित नारद मानस कएल विचार ॥
आए द्वारका कृष्ण बुझाओव होएत तखन परकार ॥
नारद कहल तखन रतिमृतसँ न करिअ मानस खेद ॥
आए कृष्ण दुख फेरब तहिखन ताहि पड़त नहि भेद ॥२६॥

★

★

★

★

५—महलक चाक भरक विशाल खता । ६—आगि ।

१—अदृश्य । २—अनिरुद्ध । ३—विजयोकाक रक्षाक समान देहवाली ।

अथानिरुद्धापहरणं यदा जातं तदा द्वारकायां किमभवदित्याह तटस्थः
भाषामीतम् —

तखन द्वारका भए गेल सोर । रतिपतिसुतके हुरलक चोर ॥
देवकि सुकुमिनि रतिक बिलाप । सनि कहु ककर हृदय नहि काप ॥
के मोर हुरलक चान चकोर । सोनि भूयन हरिसाँ के जोर ॥
सभ कह सभ मिल लेजब प्राण । पाओव रतिभुत तेहि पए नाण ॥
तखन कृष्ण मिल सभ परिवार । एकत भए कहु कएल बिचार ॥
के जग करत हमर अति मय्य । ककर छोड़ाओल अछि नहि कय ॥
गुर सुरपति नर जत भव लोक । हमर दुःख ककरा नहि शोक ॥
सभ यादव मिल कएल बिचार । के हुरलक रतिपतिक कुमार ॥
जकर तकर सभ कहलक नाम । कृष्ण नकारल एकहि ठाम ॥
तखन कृष्ण निज कहल बिचार । सुनिज सबहु हरणक उपचार ॥
कयो कुलटा तिज तकरे काज । भय मन एकहुक नहि जसु लाज ॥
हमर कहल राखब मन लाए । कयो मुनि गण ॥ हलक पए आए ॥
कौजि पठाबिअ जनु सभ दीश । पुरब मनोरथ खोजगदीश ॥
कृष्ण कथा सुनि यादववृन्द । साधल सोन भेल भविमन्द ॥
कृष्ण सभाविच शोभधि तेहन । बहुगण मय्य कलानिधि बेहन ॥
"कृष्णगत सबहिक दय कोर । तेहन शोभ जनि चान चकोर ॥

अथैतस्मिन्नेव समये श्रीकृष्णसभायां यादवमण्डलीमण्डितायां कलि-
विशारदो नारदो "हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे । हरे कृष्ण हरे कृष्ण
कृष्ण कृष्ण हरे हरे" इति पौड्यनामानि प्रजपन्नुपसमागमत् । ततः सर्वे
यादवा उत्थाय मुनिस्तं प्रणेमुः । ततः स संकृष्णानपि यादवानाशीभिरभिब-
ड्य वरासत उपविशे । ततः "हेकृष्ण कुशलमसीति ?" मुनिराह । "तवाग-
मादि"त्युत्तरम् । "हेकृष्ण सर्वे यादवा उत्कण्ठितचित्ता एव दृश्यन्ते । किमव-
कारणमिति" सा मुनिर्बभूवे । तद्वीजं कृष्ण आह "मुने गतावाप्तिमिति

अनिरुद्धापहरणमभूदिति केनापहृत इति श्रुत्वा सर्वे न विच्यः । त्वं सर्वज्ञोसि,
कदाचित्तत्कृता भवद्विदितमित्येवं मन्ये" । ततो मुनिरुद्धाहुहासं कृत्वा कृष्णमाह —
"हे जगन्निवास ! तवाप्यग्रे सर्वज्ञोऽहमिति तद्भि प्रतारयति । तथापि वृत्त-
मिदमहं जानामि तद्वदामि ।" ततश्चाकराद्याणानुरधरदानमवधीकृत्यानिरुद्ध-
नागप्राशवत्पथपर्यन्तमग्रेपवृत्तामभाषत ।

अथ भाषामेतिम् —

तखन कृष्णमन उपजल कोश । प्रलयानलक वरत के रोश ॥
बेल हुकुम सङ्ग चल बतुरङ्ग । शोणितपुर भए लागत रङ्ग ॥
बाणासुरक करव मदभङ्ग । कहीं पुत्तसँ कएलक जङ्ग ॥
होआओ तयारी न कर बिलम्ब । रतिभुतकाँ बहि कयो श्वखम्ब ॥
नागप्राश बान्हल छधि बाल । नामक मानस^१ एक मराल ॥
होएल एहन मन एकसर जाए । बाणासुरभुज काठिअ धाए ॥
कृष्णक समक मधीहित^२ सुनि । नारद कहल तखन मन मुनि ॥
मुनिअ कृष्ण हमर किहु कहल । तखन तयारी कहवा रहल ॥३०॥

अथ गथेनाह नारदः—

कृष्ण ! त्वं गच्छ गच्छ क्षणमपि न भवेद् भीतकीर्त्तौ । बिलम्बो
नप्तारं रक्ष रक्ष धन्यः यदुमण । वक्षपक्षाचलोसि ।
अक्षारिच्छावरान् जहि विधुरिपुं^३ कोर बाणासुरो य-
स्तत्पुत्री पुण्यपात्री बिलपति नवहं नेतृगणगतस्त्वाम् ॥३१॥

तदुत्तरं कृष्ण उवाच—

गच्छत्वग्रे च सेना सपरिकरतरा यादवास्ते सुसज्जाः ।
गत्वा पश्यन्तु सर्वे समरभुवि मुने मद्भुजानां विलासः ।
भक्त्यानेन कुर्वन् सकलभुजपरिच्छेदनं बाणनाम्नो
यो वा शक्यतां सहायस्तमपि कृतकलिं कोपितं तोषयामि ॥३२॥

१ - युद्ध फारसी शब्द । २ - हमर मन छपी मानस शरीररक्त हेतु हंस ।
३ - जभीष्ट ।

४ - तारगणक बीज चन्द्रमा । ५ - कृष्णक मुख सभक औजिक काँद भेल छल ।

एतदुत्तरं नारदः पुनराह—

शेमायाः सा न गम्या दिशि विशिषि बहिरस्यतो जातयेदः
तत्पारे कोऽपि गम्या भवति न सहसा या पुरी क्षोणितोका ।
प्रशम्नं पुण्ड्रजम् स्वयमपि गच्छेत् तत्प्राप्त्या नृणां नीत्वा
गन्तव्यं बाणभेदे कलिनवसम्पुङ्गः कोऽप्युत्तं ऽतिकीर्त्तं ॥२३॥

कृष्णशाह खगपतिः—

सृष्टे खगेऽपि हि सभागमत्तदा स्तुत्वा हरिनाम तनाम दण्डवत् ।
उवाच हेकृष्ण करोमि किं तथा तथा वदन्तामिह तत्करोमि ते ॥२४॥

ततः कृष्ण आह—

एषातोऽस्मि हेमिन्त्र विचित्रतामित्रः सुदर्शनस्यास्य तवेह विक्रमात् ।
चलायु बाणासुरगर्वस्त्वैताविधानहेतो विनतास्तुताधुना ॥२५॥

ततः शनैर्वाह्यान्मुखाशया उपेन्द्रबलदेवा जातयेदः गभीरं जग्मुः । ततः
किञ्चाममवदित्यन्तरिक्षतो नारद आह पश्येनः—

प्राकारं धीक्ष्य बाहुरतिविपुलतरं श्रान्तयन्तं ज्वलन्तं,
शोलोकाधोगतस्तं क्षुभित इह परं तरुक्षं यामि चेतः ।
व्यास्ता गत्वा च नीत्वा कलशमवगतिः पुष्करौघञ्च गाङ्गम्,
व्यादाशस्यं कृतार्थो व्ययितुमिति तदादाय कृत्वा रवीन्द्रः ॥२६॥

ततः कृतप्राकारान्निवन्वा जैनतैयारोहनपराः कृष्णसंकर्षणकामदेवा असुर-
देवपुरीपरिसरं वव्रुः । तत्र बाणासुरक्षकाः कृष्णादीन् समीक्ष्य सशोभा
वदन्ति स्म । "के भवन्तो गच्छावृद्धा ? अयं मा गच्छत" इत्युक्त्वा बहवो
ब्रूता बाणसमीपमेव अगच्छुः । "हे देवदेव नागपाशबद्धस्यानर्थकारिण-
स्यहायतार्थमेव गच्छावृद्धारव्यो जनाः समामतास्तुष्टमिति तद्विषये यथाज्ञा ते
तथा वयं कुम्भीः" । "रे रक्षका मदः कां विना यथागताश्चेत्तच्छे साध्यस्मर्माणस्ते
हन्तव्या एव । कोऽत्र विचारः ?" इति प्रतिश्रुत्य रक्षकास्ते कृष्णादिभि-
र्मोदयुः स्तब्धाः समागताः । अत्र रोहाः—

कृष्णपाए राक्षसं धाएकह, कए रोना चतुरंग ।

शस्त्रं शस्त्रं नहि लक्ष्यं शह आरम्भ कएलक जंग ॥२७॥

कृष्ण-सदृशं बहव-विच पडिगेल असुर-पतंग ।

हृल्लभ-हृल्ल कृत-ताडना ककर अंग नहि भंग ॥२८॥

काम-सुमशर अंगनि जगि, स्वयं असुर रण-बीज ।

विलितासुत तख दक्षित रिपु रक्त जठं धम नीच ॥२९॥

किं कहव तखगुण धीति हम कृष्ण-आदि जन चारि ।

"हेला हरषित समर विज लक्ष लक्ष रिपु मारि ॥३०॥

किछु बाँचल जे असुर जन बाणासुर तट जाए ।

सूनि चारित खब जयित मन देल हकुम अकुल ॥३१॥

तखन तआनी कएल रिपु, वैरोपनि रथ जाए ।

सामुख तवरिवा मलि, रण भुति पट्टे चल आए ॥३२॥

कहल कृष्ण जे कोव कए बाणासुर अतिधूर ।

"भूज कण्ठुति मम दूरि कए, करह मनोरथ पूर ॥३३॥

के नहि जानए हमर, तीति भूवन परधान ।

तापर सम्म सहायता, के जग हमर समान ॥३४॥

इति बाणासुरगर्वगिरि निराम्य वासदेव आह—

अपन प्रशंसा उचित नहि, गुण बुझि जान सराह ।

विचकार कह हमहि विधि, से जग बुझव अवाह ॥३५॥

"पीन काय देल हेनु नहि सत्ता बलक निदान ।

बलिहृत वामन-याचना, समझ चरित जग जान ॥३६॥

मिदि-सम तनु गज लक्षमह, ताविच सिंह समाए ।

एक सकल बलमलिन कए, राजशिर-मुहुता खाए ॥३७॥

१—युद्ध । २—कृष्णक सदृश-चक्रकी आंगिक वीच में असुरकी फतिमा पडि गेल । ३—कामदेवक फूलक बाज तख समान । ४—गल्लक गहूरी चीरल । ५—अवहेतनासे उपेक्षा पूर्वक । ६—तिरोत्तमक पीन बाणासुर । ७—बौद्धिक कुटिपेती । ८—मोट देह ।

राम तनुक अति एक पुनु, जाए हल दशवीश ।
 तोहर^१ पितरमह हल हम, नरहरितनु जगदीश ॥१८॥
 तोहर शब्द हम खर्च कए, काठब दशदात बाहु ।
 प्रगत होएत सभ लोक विच, जनि विषु आसए राहु ॥१९॥
 पुनव कएल हम विषु मिलि, देवासर-रंग्राम ।
 सकल असुर-जन भारि पुनु, पुरल इन्द्र मन कास ॥२०॥
 पुअ भुज-कण्ठति समन कए, तखन बजाओव नाम ।
 अब किअ करह बिलम्ब रण, बाणासुर निज धाम ॥२१॥

इति कृष्णोक्तभवगम्याऽ "सुरारिरयमिति" मनसि बुद्ध्या जनिषुषो जननप्ररणे
 निपते एव तर्हि विष्णुद्वारा समनकलेद्वारमेव मन्ये । का चिन्ता मरणे रण
 इत्यप्याजानकी भुतिरतो रणात्पलायने निरदमेव ततो युद्धान्तरमकरोत् ।

अथ छन्दोत्तर भाषा :-

राजि गज रथ बाजि भूवर विविध अयुध सङ्ग ।
 कहव की हम रङ्ग रचना वृह कविविध भङ्ग ।
 अति कराल विशाल चमकए शक्ति-पट्टि-जाल ।
 पास मुद्गर भास चौदिस चापधार कए बाल ॥
 युद्ध सम दिश जाए लावल, कहव की तनु भेद ।
 बाण प्राणक पास ताकधि, करधि मन बहु खेद ॥
 कृष्ण-कर वर बक चमकए, देखि नहि सक लोक ।
 अन्ध बन्ध कबन्ध ऊठल, भेल रिपु दल शोक ॥
 तेजि प्राण कुपण अध-भज, नहल बहुविध चाप ।
 बरिस धर जनि बारि बारिद, कए गर्ज-कलार ॥
 आंख धरि नहि हुमर सङ्गर, भेल दोतर छाड़ ।
 आज वादव तोहि पराभव, होएत मोहि तह माड़ ॥

१—बृह प्रवितामह हिरण्यकशिपु । बाणक पिता बलि, तनिक
 विरोधन तनिक प्रह्लाद ओ तनिक हिरण्यकशिपु ।

सूनि मदुमणि कुक्ति-मानस, रचल आमुष डेर ।
 बुद्ध बलिमुत रद्ध भए भेल, विकल मानस भेर ॥
 मानि हारि विचारि बलिमुत, भेल शंकर पास ।
 कहल निज दुख बाहि कर-पुट, पुरिअ भगतक आस ॥
 तखन हसिकहु कहल शंकर, "बाहु-कण्ठ ति तोहि ।
 छूटल, निज घर जाए बैसहु, कहहु की फेरि मोहि" ॥
 "देव तुअ अब धरण सेवल, छमिअ सत अपराध ।
 करिअ जाए सहायता मम, हरिअ दुख अगाध" ॥
 भगतबक शिव आनि^१ पहुँचल, प्रमथ-गण सब लाए ।
 कृष्ण देखि विशेष हरषित, सम्भु बाण-सहाय ॥२२॥

कृष्ण आह शिवं प्रति :-

बाण सूर-अरि विदित शंकर शंकर कारण आज ।
 तखन मोहि तोहि युद्ध संभव, शंकर होइछ लाज ।

उत्तर शिव आह :-

भक्त-वस हम जगत मानए, सुनिअ वादव-राज ।
 कहल से फेरि जलज फेरव, तखन को जिव काज ॥
 तखन बलिमुत सबल नएकहु, फेरि लाधल जंग ।
 तखन सभ मन भेल सचकित, किदहु भावि-तरंग ॥
 समर-निर्द्वय मदध हरि भए, चक कएल कराल ।
 असुर-बल-विच जाए फेरल, समित-सुर-रिपु-जाल ॥
 तखन हलधर मदन खगति, कएल कोप-विकास ।
 कतेक बाणक फौजि जूझल, कुञ्ज-पुञ्ज हुतास ॥
 देखि हारि विचारि सिरजल, सम्भु ज्वर विकराल ।
 जाए हलधर-तनु समाएल, बठए हिंभ अतिजाल ।
 तखन हरिअ कहल हलधर, उठए तनु अति आह ।
 करव की हम अवश भेलहु^१ जेहन नाम मराहु ॥

१—युद्ध-पक्षि के ।

हरि के तनु जर आए पहुँचल ससए कणलक कोप ।
 तखन हरि-मन पहुँच भए गेल, करिअ हर-जर कोप ॥
 तकर कारण हरि विचारल, करिअ किअ परकार ।
 हमहु सिरजिअ सेहन जर भर, असहु अति विकरार ॥
 तखन सिरजल सौरि^१ निज जर, हुअ अन्त हुताश ।
 अपन सबहुक जर निकालल, सोब जर हन-आश ॥
 निकसि हर-जर धाए सविनय, खतल हरि-पद जाए ।
 करए लागल बहुत मोचर, नाथ लीअ बचाए ॥
 सद्य भए हरि सुनि बिनती, निरिअ-जर-भर काटि ।
 तखन माचव भान कए पुनु, देल जगभरि बाटि ॥
 हरिक सिरजल जर पराभव, सकस के जग आत ।
 सदस भए हरि मन विचारल देखि कप भयान ॥
 सुनहु निज जर असहु बाग भरि, सहस के तुअ बाह ।
 हमर तनुवेश अन्त बुझिकहु तखन पर-तनु जाह ॥
 तखन जर हरि तनु समाएल, भेल शीतल लोक ।
 "सीरपाणि, रतीश, बिनतातनय" भेल अशोक ॥
 इ सभ भए गेल तखन शिव बल बाण लागल जंग ।
 कतए धमि सक हरिक शरहति, दामित भोग सरंग ॥३२॥

जखन बलिखत भेल निजिजल, "मिरिअ काँ भेल रोप ।
 कएल शंकर रज-तयारी, हरिक तहि किलु रोप ॥
 तखन हरि-हर जगत-दुखर, दुख-दुख पसार ।
 बुझए नहि दिन राति सङ्गर, अस्वजाल अधार ॥
 हरक शर भेल उरग विधर, चलल माचव-तीर ।
 तखन हरि-शर गवड भए कहू हरल हर-शर-भीर ।
 निरिअभए भए गजक आकृति, चलल मिरिअर-वास ।
 तखन हरि-शर सिंह तनु भए, हरल शिव-शर-आस ॥

मिरिअ-बाण निपीडिका भए, पड़त सुदुखनि-अङ्ग ।
 हरिक बाण मयूर-तनु भए, कएल हर-शर भङ्ग ॥
 अहुव कत हब शरक रचना, रचल शम्भु अन्त ।
 भेल हर-शर सभ विस्तर बूझि शिव-शर अन्त ॥
 हर तमोभय समर—निहँय, लेल बाधुद्ध शूल ।
 कएल हरि कर चक्र-धारण दुहु जगतक मूल ॥
 उवाल-जाल कराल देखि सभ, आखि लेलक भाषि ।
 खसल रवि बिधु तारकागण, धरणि छठलिह काँपि ॥
 सबहु देव विचार कए मन, कहल बिधिसँ जाए ।
 "बाण कारण परम विग्रह" कस अनुग्रह^१ घाए ॥
 एकसँ भए तीनि विग्रह^२, जानि काजक भेद ।
 एकर बिगृति, तखन की जग ? देव राखिअ धेद^३ ॥
 अस्त्र युग नहि मोख^४ एकहुक, बुझि कञ्जज^५ आए ।
 तखन कए बिधि उचित मोचर, रहस बंसल जाए ॥
 यिकहुँ एक अनेक विग्रह^६, तीनि तरहक काज ।
 करिअ ध्यान धियान मानस, तखन उपगत लाज ॥
 हरिहरभूति सुनि शंकर तेजि आयुध—जाल ।
 कहय किलु हम सुनिअ माचव बाण जानब बाल ॥
 फेरि हरिसँ कहल शंकर बाण दुहु भुज राखि ।
 हमर वरतहु असुर-रक्षण भेल देखधु आखि ॥
 जखन शंकर दूर उपगत कञ्जभू^७ निज गेह ।
 मूल चक्र समेटि राखल हर्षलोक निवेह ॥३३॥
 तखन हरि फेरि रङ्ग उपगत हुलसि बलिखत देखि ।
 कएल मुड सगड क्षण क्षण शम्भु-दम्भ विधेवि ॥
 हरिक मन अति क्रोध उपजल सिरजि अस्त्रक जाल ।
 जाए छारल बलिक सुत-बल भेल बाण बेहाल ॥

भेल अन्तरहीत^१ बलिभुत कएल मादिक युद्ध ।
 ओतहु हरि-धर जाए छारल सकल तनु अवशुद्ध ॥
 तखन बलिभुत भेल आकुल कोपमय रण आए ।
 करए लागल रङ्ग कतिविध चित्त शम्भु सहाय ॥
 तखन हरि अति क्रोधमय भए चक कएलन्हि हाव ।
 देखि बलिभुत भेल हरतट कष्टल भिरजा-गाथ ॥
 "लोहि तेखि नहि शरण दोसर भेल अओसर^२ केरि ।
 करिअ भक्त-सहायता हर उचित ताहि न देरि" ॥
 "सुनहु बलिभुत करब हम नहि आव हरि सी रङ्ग ।
 हमहि हरि तनु बुझ जानहु काट के निज अङ्ग ? ॥
 हमर आव सहायता नहि जाहु निज बल पाए ।
 अपन दोष बिचारि देखहु करब की हम जाए" ॥
 तखन बलिभुत आँखि पहुँचल रङ्गभूमि समीप ।
 देखि हरि-दुति तेहन भए गेल भानु तट जानि दोष ॥
 बाण-बाण बिचारि माधव चक बेलन्हि राखि ।
 माँझ-धुनि कए चक केलन्हि कोप-पूरित आँखि ॥
 बाण दिमि हरि हेरि भाखल "कतए तुम बल गेल ।
 करिअ साफल निज मनोदय तकर अवसर भेल" ॥
 सुनल बलिभुत हरिक भाखल तखन उपजल रोष ।
 केरि हरिसी रङ्ग लाचल अस्थ गहि भरि दोष ॥
 इन्द्र सङ्गर होमए लागल चकित लखि सग लोक ।
 कहए लागल किदहु भावी करए लागल लोक ॥
 तखन कर गहि चाप शर-भर कएल यदुमणि रङ्ग ।
 शरक तर बलि-वाल आँखि देखि निज बल भङ्ग ॥
 तेहन बाणक तरह देखिकहु भेल वधमुख^३ कृद्ध ।
 धाए आए सहाय बाणक करए लागल युद्ध ॥ ३॥

१—अवश्य । २—अवसर ।

३—कार्तिकेय ।

प्रथम अविनहि^१ रणक आरम्भ युद्ध वाहन इन्द्र^२ ।
 वृषदे-पक्ष तखायुधाकुल भेल शिखि अति मन्द ॥
 तेहन देखि विशेषि हरसुत लेल आयुधपुञ्ज ।
 मरुत ऊपर कतेक फेसल करए चाहिअ लुञ्ज^३ ॥
 तेहन यदुति तरह देखल बहुत मन भेल कोष ।
 "तारकारि-मयूर आकुल भेल के कर मोष ॥
 जखन हर-सुत बड़ वेआकुल अपन देखल हरि ।
 शक्ति कर गहि मज्जा कएलन्हि अस्थ बेलन्हि टारि ॥
 तखन काल कराल-सम कर चक लेल मुरारि ।
 भेल सभ दिश परम क्षोभित सकल लोक बिचारि ॥
 कहल यदुमणि "सुनहु वधमुख करहु निज परकार ।
 काटि मुअ कर शक्ति काटब तोहि चक क बार" ॥
 तेहन अन्तर बूझि भगवति तेजि अन्धर^४ आए ।
 कृष्ण सम्मुख ठाकि भेलिहु लाज देल बहाए ॥
 "कृष्ण कृष्ण दयाकवाशय हमर राखिअ तोष ।
 करिअ बाल मोहारि माधव छमिअ जत सुत दोष" ॥
 तेहन तनु लखि भाँरि दूग हरि कएल सुत-जिब-दान ।
 बाण कारण बैर सिरजधि तेहन देखि मेआन ॥
 तखन निज सुत सङ्ग लए कहु देखि गेलिहु गेह ।
 बाण प्राण बचाए हरिसी समर दुइ भूज देह ॥
 एहि उत्तर बाण-सेना रहल जे चतुरङ्ग ।
 घाए जाए मुरारि सभ मिलि कएल सबहिक भङ्ग ॥
 रहल नहि दल मोह अवबल पुख बर पछताब ।
 हरि सुदर्शन जखन फेरब करब की हम आव ॥

१—बहुत वाहन से युद्ध । २—मरुतक नहकपी अस्थक द्वारा व्याकुल मयूर ।

३—लोचन । ४—तारेकामुरक शत्रु मयूर विकल भेल ओकर रक्षा के करत ?

५—बन्धन ।

यत्किं नृप-सुख सर्वतु पुरित छल्लु की मति भोला ।
जाए समुद्र रिहाए सब विश्व लखन की बर लेल ॥
तकर अवसर आए पहुँचल करत के अब धाण ।
हरिक ओध निरोध के कर पड़ल संकट प्राण ॥
सकल मूर्ति दिमान कहलक "सुनिअ बलिस्त देव ।
आव की पछताए अओसर बितल स नृप सेव" ॥
एहि उत्तर भानु-सत-दुति^१ हरि सुदर्शन लेल ।
बाण-भूज सभ क्षणहिं कारल बूझ भूज तजि देल ॥
"ज" क छल तोहि वाहु-कण्ठहिं छुटल से सभ आज ।
आबि से पुनु भेल चाहए तकर की मन लाज" ॥
एहि उत्तर बाणकी भेल परम हृत्स्वक जान ।
जोरि करपुट कहल हरिसं कएल मानस ध्यान ॥३३॥

देवभिरा हरि स्तीति अर्थः—

जय सारधराभारधारणोद्धारधारण ।
संसारसारकगारे देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३३॥
वृष्णिगणवत्संज्ञा वसुधाहो दधानिधे ।
त्रिविधाकारकृष्काट्यैशदेव नमोऽस्तु ते ॥३४॥
प्रह्लादाह्लादलीलान्तर्यामिणीविश्वकृत् ।
भक्तिभक्त्यभुतेश देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३५॥
कर्ता हृती च वातापि विश्वस्य बहुकृपायक ।
अज्ञातमसेनस्त्वो देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३६॥
अवोचमन्ययेनैव वरदानविधावहम् ।
स्वभावा कारणस्तव देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३७॥
कुम्भकर्णः कृततपो वरदाने धिर्वैः पुरः ।
अवोचस्त्वत्स्वद बुद्ध्या देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३८॥
ममैव दोषः सर्वोऽयं कृतो रङ्गस्त्वया समम् ।
आयावशस्य गो मणो देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३९॥

कथं सन्तुष्टतामेपि कष्टतामपि माधव ।

को वेत्त चरितं कोऽपि देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३४॥

अर्थः सन्तुष्टताहं हे कृष्ण धिक् । जीवनान्तरणमेव वरं तथैव विधेयम् ।
तो वेत्ततादिशमन्येषा तथा युक्त । कावस्था मय पूर्वं, कीदृश्यधुनेति विमृश्य
बहुव्याकोष एव मनसि । अंतः परं किं राज्यादिकम् । अवरप्रीतये सर्वं मया
तुभ्यमदायि मत्पित्रा वामनाय यथादायि तथैव । किञ्च मय दुःसहसं च मया
पाणिनीकृतमित्यपि महद्भाष्यम् । तत्कुलमजानता मया तेन शुद्धमकारि
तत्फलमेवैतदभूत् । मम दीपमग्नयन्तवसो कृपासिन्धो दयां कुर्विति
मामकी भूयसी प्रार्थयेति किं बहुना" ।

अथ व्यापासुरस्तुत्यादि निगम्यावन्धुबन्धुः कृपासिन्धुः श्रीकृष्ण उत्तरमाह
प्रथमं पद्येन । यथा—

काले जायत एव जन्तुरखिलः कालोऽवति प्रायसा,
कालो नाशकरो हि कालवधगो दृष्टञ्च कालात्मकम् ।
कालः कीदृति काल एव वदति (?) नोयस्य सर्व्व श्रयः,
कोऽहं तत्पुरतोऽसुराधिप भवे कुष्मिता मामकी ॥३४॥

यथा—

इवो राज्यं रामचन्द्रस्य भविता सर्व्वसम्मत्तम् ।
संस्तसीतया सार्धं कालारे तन्निदर्शनम् ॥३५॥
पण्डवानामहम्मिनं विषं भूरि पराभवः ।
द्रौपदी च शरीरस्ता तर्ज्वगुनिदर्शनम् ॥३६॥
एवमादिद्या पश्य काल एवान्न कारणम् ।
निमित्तमात्ममेवाऽहं तथापि निगदाभ्यहम् ॥३७॥
भवितव्यं भवत्येव नाभव्यं भवति भवचित् ।
नाहं हि त्वं शोचयिषुमनिवार्य्येऽसुराधिप ॥३८॥
यदि भक्तः पुरारेत्स्वं क्षापरोऽव न कोऽपि मे ।
आवयोर्न च भेदोऽस्ति किमावरणो भवेत् ॥३९॥

१—सूर्यक सए गुना प्रकाशित सुदर्शनवक्त्र ।

विशुद्ध सर्व राज्यदि गच्छत्वं शिवसन्निधौ ।
 सत्र नृत्पादिकरणे वाच्छासिद्धिर्भविष्यति ॥४२॥
 अवापि राज्यं वैभवं गृह्णामि प्रीत्यै तव ।
 दद्यामि त्वहं कर्मभित्तुं रामो यथा इदौ ॥४३॥
 उपानिस्तपोः कृत्वा दष्ट वा जम्बूलमालिकाम् ।
 गच्छामि द्वारकां वृत्तं विदितस्तेऽस्तु यद्विदम् ॥४४॥

इति श्रीरत्नपाणिशर्मविरचितायामुवाहरणताटिकायां युद्धपर्यन्तमाद्य-
 प्रकरणं समाप्तम् ।

★ ★

अथ बाणासुरः सप्ताङ्गं सकलराज्यं मिश्रकलत्रविचित्रचित्तसोधादि-
 सौख्यं पुरीञ्चत तत्वा शिवान्तिकं गन्तुमुत्सुकोऽभवत् ।

अथ भूजक्षत्रयाकुलमनाः सख्यविराग आशुतोषं हृतदोषं शंकरमभि-
 लक्ष्यीकृत्य बाणासुरो वदति । अत्र शोभा : -

अतक ध्वजा अति विकल मग्न, विकट स्वरूप निहारि ।
 अथ की जाएव सौख्यं विच, की हम देखव तारि ॥४२॥
 शिव - पद सेवल जन्म भरि, तथ फल सभ सुख भेल ।
 घरक समय मन विचिक वषा कीदहु मति भए गेल ॥४३॥
 जयन अवस्था देखि सभ बाणासुर तजि देल ।
 क्षणभङ्ग गुर तनु देखि मग्न हर - दर्शन - मति भेल ॥४४॥
 जग भरि अशरण - शरण शिव, फेरि जाएव सुत पास ।
 करव अराधन तजर हर, पुरव दासक वास ॥४५॥

अथः परं केलोसि शिवसन्निधिं प्रस्था गद्योत्तरूपं शिवं पश्यन् स्तौति
 पद्यैः—

भूजङ्गवरमेखलं, रक्तिकजालमुभ्रत्विषं
 शुचीरुद्रवभुवक्षं जटिलमिन्दुचक्षं भूषम् ।

विशुल्लिखमजं विभुं प्रणयस्वमुल्लासिनं

विगम्भरमहं भजे कमपि कामदं तत्पदम् ॥४४॥

परीवमुद्गच्छन्ना यदि हि जातु या जायतेऽ

धनोऽपि धनदायते विश्विरीशकामायते ।

अवापि वृक्षायते विगतद्वयकक्षायायतेऽ

चलोऽपि लघूयायते तमिह विश्ववन्द्यं स्तुषे ॥४५॥

सूरी न भवतः परो जगति कोऽपि भूतेश भो

निरङ्कुश इहानुभाविषय एव कृत्वायिभिः ।

सदैव निजकर्मणो यदि हि भोक्ष्य एवं फलं

किमत्र गरिमा तव प्रणतभयदोहं शिशुः ॥४६॥

अचिन्ति मनसा सुरस्त्वदितरो न शक्तिर्मया

कदापि शिशुनाधुना विपदि जामि यस्मान्तिकम् ।

भवन्नतिपरस्य ये वमपि दोषदृष्टिः कदा

किमस्य भविता विप्रो तद्विति नैव जाने गतिः ॥४७॥

सस्य सुरभिन्नतः सपदि संपदः सन्तु वा

मत्तावरगता अपि प्रमथनाय नेहेतराम् ।

परन्तु भवनोऽनित्यं कुशलवाम नाम स्तुतं

ब्रजन्तु दिवसानि मे जपत एव साधुवदम् ॥४८॥

विहाय किल कायं वजतु सत्पथं मे मनो

मनोजनिकवाक्ये विशतु मायुसम्भवंने ।

गमद्भयनिवारणे सकलकारणे कारणे

भयप्रवृत्तये सदा वस्तु नाथ नाथाम्बहम् ॥४९॥

तदीयचरणाम्बुजं मनसि निम्नय वेधा जगत्

सज्जयवति कञ्जजो यजनयाचको माधवः ।

कथं न भजते यमो नितिलक्ष्मणं दुर्मते

भवेत्तमहत्पणस्तद्विदमर्षधर्मविधाक् ॥५०॥

विधेहि विपदम्बुधौ शरणमुग्रगणे शिवा-

कगन्धर्वतिले यथा भवतुष्टकर्मर्षिभूवे ।

भयन्तमनुचिन्त्य यज्जगति लब्धकामा न के
विविधचरितं जनाः स्वपदि भूरिमन्वालाः ॥११॥
हेराणु हर मे वषा स्वकृतदोषजायदुमुता
मजाजितसदासन प्रमथनाय वेदस्तुते ।
विपश्चिदसागरे पतित दुन्दुभाल प्रभो
कुरुष्व कल्याणये विलपती निजो दुष्क्रियाम् ॥१२॥

इति बाणासुरकृतं शिवस्तोत्रम् । अतः परं बाणासुरः पारिभाषिक-
महेशवाण्या भाषया कल्याणकरं शंकरं प्रार्थयति :—

(महेशवाणी)

शिव मोर करिअ लगाने ।
अपहृ ब्यथा हम संगे न पारिअ संकट पड़ल पराने ॥
नाचि काछि शिव तोहि रिझाओल आव होएत बरदाने ।
तखन भेलहु मायावश अभिमत्त पांचल आनक आने ॥
तकर उचित फल आए तुलाएल जेहन कएल अभिमाने ॥
दश धन जाहु क्षणहि काटल गेल नहि दोषी खयालने ।
सभ तेजि आए आए तुअ परितर छए मन आस बिधाने ।
देखिअ नाच हरणि हर हेरिअ हरिअ दोष - सन्ताने ॥
देखि नाच हरे सभ दुख फेरल कएल गणक परधाने ।
रत्नपाणि भन वरद एक शिव जगत-विदित-वश-गाने ॥१६॥

अपरञ्च गीतम् । छांदोत्तरम् :—

आज कारण विकल बलिमुत्त गेल संकर-तीर ।
छलहु के हम भेलहु की अब कहए नहि रह घोर ।
तखन बलिमुत्त कएल गोचर जोड़ि कर-गुट माख ।
विकल भए तुअ पास अएलहु सवय हेरिअ नाथ ॥
देखि गोचर तखन संकर देल अभिमत्त दान ।
छुटि सभ दुख भेल अति सुख रूप देव सधान ॥

तेजि राज समाज सुत विते भेल शम्भुक दास ।
देखि शुभ-गति यमधनाय वर शम्भु पूरल आस ॥
रत्नपाणि विचारि मन भन असत जग अभिमान ।
बाण भूपति तन्हिक दुरंगि एहन भेल निदान ॥१७॥

इति बाणासुर वरदानम् ।

अथाः परं बाणासुरपराजयं समीक्ष्यान्तरिक्षावागत्य कन्धविशारदो नारदो
जयाश्रीभिरभिवृष्य वृष्णिर्वशावर्तसं कंशघातकं सपरिवारं श्रीकृष्णं
प्रत्युज्जगाद वचने :—

कृष्ण त्वं धर्म्य धन्यस्त्वमसि हि जगतां त्वत्समः । कोऽपि नान्यः
कर्त्ता हर्ता च भर्ता कश्चित्तु त्वत्तुः कार्यतो वीर्यधर्म्यः ।
आशीर्वाको मदीयो नृत्तनृत्तारिचयात्तम्य एमोऽवराधो
बाणस्मात्तु त्वदाऽभयवज्रजलवाद् गीतकीर्त्तौऽद्भुतोऽसि ॥१८॥
एक एवायत्तर्थास्तथा वनेत्येवहायवान् ।
किं पुनश्चालयश्रेण प्रद्यूम्नेन विक्षेपता ॥१९॥
एष बाणासुरो नवर्षी बीकन्मृत्युमवाप्तवान् ।
सुतोन्माया न मामस्ते विजितिरिति भूयसी ॥२०॥

अथातः परं कृष्ण उत्तरमाह :—

किमेतं वदसि देवर्षे निरञ्जिमुत्तमसत्तम ।
कृपा मा तावकी तस्या मामकी भूतिरुत्तमा ॥२१॥
कुम्भजातेन मुनिना सिन्धुः पीतस्तपस्विना ।
विष्णामिश्रेण कोपेन सृष्टिरेव कृतापरा ॥२२॥

अथ भाषया कृष्ण आह गीतम् :—

देखव कखन मदन-सुत आखि ।
उड़ि नहि सकिअ बिना मुनि पाँखि ॥
बिगु धरान नहि मानस शीर ।
कतेक समारिअ छोचन तीर ॥

बुझलन्हि बाण हमहि एक मूर ।
 भोलइन्हि तकर मनोरथ पूर ॥
 देखिअ जाए तोरित अनिरुद्ध ।
 तखन सफल सभ जानबे मुद्ध ॥
 अनुपम देवपुरी निरमाण ।
 दोसर द्वारका कएलक बाण ॥
 रत्नपाणि भन मन अनुराग ।
 कृष्ण सराहल बाणक भाग ॥१५॥

अशोचरं नारद आह । अथ दोहा :-

जे किछु बाणल अचुर जन से सभ आए तेआर ।
 कहल कृष्णपद धए रहब, निश्चित सभक बिचार ॥१६॥
 कृष्ण सधम मन वृत्ति सभ, धएलक हरिपद-कज्ज ।
 झेल कृतारथ सकल जन, भेटल जत हिन-रज्ज ॥१७॥
 तखन कहल मुनि कृष्णहीं मुनिअ देख बित लाए ।
 मन बच कायिक भजत पद, सभका रहिअ सहए ॥१८॥
 धर्म कर्म अति निरतमन, बाणाचुरक दिमान ॥१९॥
 निज पद-सेवक जानि हरि, हिनक करिअ सम्मान ॥२०॥
 करए चलल अनिरुद्धबध, हाथ गहल तखारि ।
 तखन दिमान बुझाए सभ, देलन्हि तसु बध टारि ॥२१॥
 बालक एक मनोज-बुद्धि, कतबिध कएलन्हि जङ्ग ।
 कूल शील सभ वृत्तिकहु, करब उचित रति-रज्ज ॥२२॥
 एहन चरित तसु वृत्ति मंद, अपजल अति सखीप ।
 मुनि-सम्मत तसु राज्य दए, कएल बहुत परितोष ॥२३॥
 कर-पुट सम्पुट जोड़िकहु, मोबर कएल दिमान ।
 झेलहु कृतारथ पुण्यबल, पाए भूष सम्मान ॥२४॥

भावना सीतेनामास्यः कृष्ण स्वीतिः । -

कुपादू छिटरी हेरल गाथ । स मुनिल रिपुजन कएल सनाथ ॥
 लच्छा जाए कएल हरिकाज । दशमुल मारि विभीषन राज ॥
 कांस हतल हथितहि शिशुसाज । सत्सेन पञ्चोलन्हि पुनु राज ॥
 परशुराम तनु लेल अवतार । कि कहब महिषा अपम अगर ॥
 निःशत्रिव बए लेलन्हि राज । से पुनु आएल कदवप काज ॥
 तेहन कृष्ण मोहि आज सहाय । हेरलन्हि सकल विपति बित लाए ॥
 रत्नपाणि भन जग सब मान । भक्तक बध जानब भागवान ॥२५॥

दोहा :-

सपरिवार बसुदेवसुत, सभ मिलि कएल पपान ।
 पाशबद्ध अनिरुद्ध तट, उपगत श्रीभगवान ॥२६॥

छन्दोन्तरवाहु तटस्थः :-

कृष्ण-महाभाग रति-सुत^१ बधि । हर्षक लेल पड़ए नहि सुझि ॥
 कएल ब्रह्माम सभक मन लाए । लज्जाबध किछु कहलौ ने जाए ॥
 जनिक सुधरि पद अवतहु आप । से प्रभु आए बचाओल आप ॥
 की झेल बाण कतए गेल नाक । कृष्ण सहाय बरस थिक भाग ॥
 कतैक विपति खेवल प्रहलाद । विष होअ अमृत जनिक परसाद ॥
 मन बच कायिक हरि भाज-लोक । से जग पावन पावन शोक ॥
 कि कहब हेरब जग हरि भाहि । कतए पराभव लवगत ताहि ॥
 रत्नपाणि भन मन कए धीर । भजत तकर हृदहि मुनीर ॥२७॥

अथानिरुद्धः सुरगिरा श्रीकृष्ण स्तुति गवने :-

जय जय कृष्ण वृत्तिगर्वाश्रितेभ्यः, कक्षासंधक, सुन्दारकबुद्धवर्जितपद्मदन्त-
 रविन्द, शलदन्तदमकरन्दवारिधारास्वर्धुनीपावनीकुताखिललोक, शोक-
 हारक, भावसुष्टिरितिबिसृष्टिकारक, भाक्तारक, शत्रुहस्तगजेन्दुमोक्षदक्ष,
 मधुसूदनविषक्षपक्षक्षारसमक्षलक्ष क्षणदायोक्षज, पुण्डरीकाक्ष, मृतमन-
 धनधनकांत, घराशारश्वांत, रमाकांत, दातवैद्यान्त, द्विद्विमान्त
 दूरीकृताक्षान्त, ध्वान्तान्तमन्तानधितान्त, खगेन्दुमान, खण्डीकृतकलित-

कीदृशवाणभुजदण्ड, सुरगण्डन, विप्रचरित, सम्भूमित्र मित्रवह्निविधु-
लोचन, दुःखगोचन, जितविरोचन, भक्तगोचन देवदेव, देवकीवसुदेवसुत,
भूदेव, दारिव्यविद्रावण शमितरावण, शत्रुनिर्गुणरूपधारण, नामपाठा-
वह्निनिर्द्वन्द्वविध्वंसकायमायाभकारापहारक तमस्ते तमस्ते तमस्ते ॥
दरशनिरुद्धकृत स्तोत्रमिश्रस्य नारदमुवाच श्रीकृष्णः ॥ किंविधेयमधुना मुने ॥
मुनिराह—'देव सखीकृप्यवेष्टितामुपा समाह्वयानिर्द्वन्द्व पाणिपीडनसंवादने
विधेयम्' । तथैवोपा समागत्य श्रीकृष्णं स्तौति भाषया ॥—

की हूँ कहव कनेक मोरें जान । अबला बलव वयस की जान ॥
सुग सुग योगि धरति कत ध्यान । दरशन सपथ करधि अनुमान ॥
पुष्प पुराकृत १ जगत भेल । परम पुरुष मोहि दरशन देल ॥
भेलहुँ कृतारथ सब विधि आज । जगत जनक तह किकरव लाज ॥
कि कहव गहिमा अगम अपार । जनक ज्योति धिक जगत पसार ॥
रत्नपाणि भव मन अकवारि । अनुखन तन मन भजिअ मुरारि ॥४१॥

अथैतस्मिन्नेव समये बाणासुरास्तःपुरे चारुद्वारा "श्रीकृष्णेन बाणासुरस्य भुज-
द्वयोन्सहस्रभजदण्डशण्डने सकलधलशमगञ्चाकारि, तदुत्तरं राज्यादि सर्व-
मुत्सृज्य बाणासुरः प्राणमात्राश्रयेणः कृतदोष आशुतोषान्तिकमुद्ययाकिति"
मिश्रभ्याद्यतिपातमिवाकलय्य पट्टमहिष्यादिकारसर्थैः रित्रयः कीदृशस्थिता-
स्तथा कीदृशयोऽभवाविति तटस्थ आह पद्याभ्याम् । यथा ॥—

सकलामधोरा बलितपटोरा अनुपमचीरा मणिबलयाः
निजबलभेदीयादपगतरोषा विगलितछोपादिकनिचयः ।
अवगतध्रुवयाना निखिलनिधाना लसदभिमाना अपि सदयाः
मुपमाकविगीता अभवन्भीता जनताभीता गतयिनयाः ॥४२॥
किञ्च,
अनुराधिपदारा विगलितहारा, विगतविहारा, जातशुचः
सकलदितताराः पक्षिमुखसारा, लोचनधारा, हीनरुचः ।

तुच्छोक्तहामा, देवहताशा, निपदुस्पाशा सुगहृद-
स्पर्शकीकृतबासा, विगतविलासा, बलदुष्टवासा, नीतिविदः ॥४३॥

सती बाणस्य पट्टमहिष्यादिका अपि पुरजनासी स्विद्योप्यसदया वयमिति मत्वाऽ-
क्षरणक्षरण-कृष्णानुसरणमेव विधेयम् । ततस्ता अपि सर्वाऽनगवर्णा एव
कृष्णान्तिकमागतः । समागत्य ताः श्रीकृष्णं प्रत्युचुः यथा ॥—

कृष्ण कृष्ण महाबाहो चाहि चाहि दवानिधे ।
अनाथमाथ नादस्वमनाथा वयमागताः ॥४४॥
किङ्कश्यं इति जानीहि पुत्रीहि कृपया विभो ।
सर्वोक्तारिगर्वोऽसि सर्वपाण तमोस्तु ते ॥४५॥
उपायाऽदोषना सार्धं पाणिपीडन-मञ्जलम् ।
नष्टुर्लीयहि सविधे विधेरत्र विधानतः ॥४६॥

किञ्च, गीतं भाषया ता वदन्ति ॥—

जखन सुनल बाणासुरभुज-भव-लण्डन कएल मुरारि ।
तखन अम्भार लाग मोहि सभ दिश पति बिनु अगति विचारि ॥
तखन कएल तुअ तरव-विवेचन देखल जग हरि एक ।
नायावस तभ राग बेआपित कि कहव तकर विधेक ॥
अज्ञादिक सूर सकल विकल मन तुअ मायावस लोक ।
अनहि कृष्ण वकासधि नत बुझ, तेहि पए छूटए धोक ॥
जनन मरण दुहुँ थीक नियत जग सुख दुख अनियत जाणि ।
करिअ कृष्ण तुअ पद-सुग-सेवन की विधि लीखअ जानि ॥
रत्नपाणि भव-सुनिअ मुदित मन तेहि पुरए जग आश ।
हरि-पद-कमल विमलमति भाविअ तखन ककर जग वास ॥४७॥

अतः परं बाणामासीत् बाणासुरमहिषीचरितं श्रीकृष्णं प्रति वदति स्म । भाषया
गीतम् ॥—

बाणासुरक विविह महिषी^१ तिअ असुरकोष जनि पाए ।
 तखत खतत मन तुअ पद विधान पुण्य पुराकृत पाए ॥
 राजपाट जत तकर समीहा सभ हिन तेजल आज ।
 सेलिहि कृतारव तुअ पद देखितहि कहलन्हि के धिक लाज ॥
 कतए थगिअ हम देश दिनभर कतए द्वारका घाम ।
 तखन आनि हरि दरशन देलन्हि पुरित भेल मनकाम ॥
 अपन कर्म फल सभ जग भोगए ताहि तरह नहि जान ।
 शोकितपुर पति पाए बरिस गति धएलन्हि गए शिवध्यान ॥
 रत्नपाणि अत सनिअ सकल जन अतियत जीवन जानि ।
 "निधननिवत बुझ ध । जन तेजिअ आबिअ सारइपाणि" ॥४३॥

अथ प्रस्ताव लक्ष्मणा पुनरपि धीकण प्रार्थयति पञ्चभ्याम् :—

कृष्ण त्वं नाहि नाथ त्रिभवनविजयी दुष्टमर्वापहारी
 बाणरथ-मादयाशुद्धया न परिहर हरे त्वद्गत मे सखाक् ।
 भाग्यं बाणात्मजायाः कुञ्जपुरय भवभक्षुभाख्या भवेद्या
 स्फुटस्फुटः कुतो वा भवति यमनतिः को हि वक्तुं तरीश ॥ ४१ ॥
 कर्ता हर्ता च गोप्ता भवति य जगतामेक एवेति सत्यम्
 प्रायः कार्यप्रभेदाज्जगति बहुसमुद्राकारोपपन्नेभ्यः ।
 देवाः सेवा अदेवाः सृष्टिनिचयविदः के न कुर्वन्ति सर्वे
 तेषां भ्रान्ता अहन्ते पदकमलमुगं नाथ त्रीणि प्रसीद ॥ ४२ ॥

अथाता परं कुण्डेलीकम् :— हे बाणासुरामास्य त्वं समर्पितभक्तोसि मया-
 कोवि । ततः कृष्ण आह नारद प्रति :— "हे मुने अतः परं कथादानकर्ता
 को अविष्मतीति" निशम्भ मुनिराह "हे कृष्ण ! बाणासुरामास्य एव तद्वक्तु-
 स्वात्तत्पटुमहिषीशंभवाच्च" । "अत्र कः पुरोधाः" । उत्तरं, "विर-
 चिवरेव स्मरणीयम्" । अतः स्मरणे समाजमाम सः । अथ विवाहोद्योगे
 सति अस्तरोदणालसमामस्य ननुषुः, मन्त्रश्रावित जाणुः । आदौ विष्मनिवा-
 रवत्स्वादिनायकस्य मङ्गलश्लोकः । यथा—

३—पदराती स्त्री । ४—मरण निश्चित । ५—कृष्ण ।

१—अथ शुभशायक वरद विनायक सुरवर-नायक वेदनुते
 अथ हर-बालक नतजन-पालक मणिमय-माल-कलाधिपते ।
 अथ भय-भञ्जन सरमुनि-भञ्जन रिपुचङ्ग-भञ्जन मञ्जुमते
 अथ भय-कारक दनुज-विदारक निज-जन-तारक विश्ववते ॥४३॥

अथ दुर्गतिनाशकरवाद् दुर्गमिती भाषया :—

कत कत मङ्गल देधि भवानी । तुअ पर-परम गिरिश^१ बरदात्री ॥
 तोह धनि जतनि एक सभ जाने । पुरत मनोरथ के पुनु आने ॥
 संकट विकट मेठए तुअ नामे । धिवुझ सेबि तोहि पुरित कामे ॥
 दशविष का सहो परिनामे । दुर्गति—नाशिनि दुर्गमि नामे ॥
 तुअ महिषा जग के कहू देवा । पुरित मनोरथ तुअ पदसेवा ॥
 रत्नपाणि भन मन अवधारी । दक्षिण रहिअ गिरि-राज-कुमारी ॥४४॥

अतः परं वराभरणसमये कलशमेकमहयाममक्षणभवतुपुरितं पल्लवाच्छन्नमुखं
 काचित्स्त्री शिरसि निधाय गायत्रीभिर्वन्द्युवनिताभिरसह सकुनं प्र-
 वरपाश्वर्माणचलति स्म । वर उत्थाय सति सम्भवे तद्वष्टमद्ये पुनकलादि
 राज्यादि द्रव्यञ्च प्राक्षिपतिस्म । अथ वरचलनमारभ्य कथादानादि-
 पर्वण्यस्य वीतमेकं भाषया, तस्य "पड़िलनी" ति नामावधेयम् ।—

कलश एका जल-पुरित रे, लए चलु धए आये ।
 गाइनि बहुत चलए सक रे, पड़ुअए वर पाये ॥
 वरक शग लए शिरसी रे, दोपटा गड़ लाई ।
 चलए सगहु घुम घुम कए रे, नाबए शुभदायी ॥
 बीविश मण्डप धूमिअ रे, वर आब सुदामे ।
 पहिरवि तथ पट पोशर रे, पुरुजित मन कामे ॥
 कएल अयोक्कर बीधि रे, मण्डप बिध जाई ।
 अरहित भए वर जाए रे, कन्यागृह धाई ॥
 कन्या सहित चलए वर रे, सुनइत दाग पीते ।
 अथ बिध मङ्गलचार रे, कि कहव तसु पीते ॥

१—विवाहक आरम्भमे मन्त्रश्रावित वादना । २—महादेव ।

कम्पादान लेल बर रे, शुभ वेद विधाने ।
तखन होम विधि शोधित रे, अनन्य परधाने ॥
रत्नपाणि भन मन पुनि रे, आशिष शुभकारी ।
दुलहि दुलह भेल समुचित रे, जीवधु युग चारी ॥४४॥

अपरञ्च । पड़िखनीति नामक ध्रुवम् :-

निरखि बर सब गुणक आधार, पुरल सबहिक आस रे ।
जनिक रूप अनूप सब कह, बन्धमय जनु द्वार रे ॥
धन्य ते विधि जनिक सिरजल, अवधि रुचि परगाल रे ।
हृदय शशिमय हार सोभित, कान कुण्डल भास रे ॥
वचन मधुमय सद्य मानस, नयन कञ्ज विकास रे ।
गदन तन अनुकूल राजित, शील सिन्धु विलास रे ॥
कंसहसन—बंश अवतार, सहन रूप तरास रे ।
सकल नीति विचार कौबिद, लेल सुरतक बास रे ॥
जनिक दरशन तेहन मन होअ, बितए युग सह आस रे ।
दुलहि समुचित जखन सब गुण दुलह मन समु बास रे ॥
रत्नपाणि प्रेम दिन दिन, बाढ़ हो न हरास रे ॥४५॥

अब जाते विवाहे श्रीकृष्णो नारदमाह :- "मुने अतः परं द्वारकागमदमुचित-
मिति मन्मानसे प्रतिभाति, परन्तु भवताय्यथा विचारः" । ततो मुनिराह
पद्येन :-

सिद्धो मनोरथो मेऽद्य सिद्धस्तेऽलिलसाहसः ।
चतुर्थीकर्म संपाद्य नन्तव्यं द्वारकां प्रति ॥४६॥
बाणश्रीप्रभृतीनाञ्च नीताति विविधानि च ।
श्रोतव्यानि महाबाहो सर्वमोदकराणि च ॥४७॥

इति नारदवचः श्रुत्वा कृष्णोऽप्याह तथास्त्विति । ततो बाणस्य महिषी महा-
हर्षमुपागता । अथावसरवशाद् बाणासुरमहिषी पुनः श्रीकृष्णं प्रार्थयति
पद्येन :-

का माता जनकः सुतादिरपि किं राज्यं धनं वा सुखम्
कथयन्ते न सहस्रता मुररिपौ कथापि नो जायते ।
मोक्षः कर्तव्यं दर्शितादृत इह स्वपादकञ्जाचर्या
द्याते हृत्तिरियं यदा हि पुरतः संवेहं मुक्तिरुपती ॥४८॥
किञ्च,

द्रष्टुं स्वचरणारविन्दपुगलं कुर्वन्ति भूयस्तेषां
ब्रह्माणां मुनयोऽपि ये बहुयुगे पश्यन्ति तेषां न कश्चित् ।
आम्नालोचनगोचरो यदुमये तद्भूयश्चेवोदितं
विश्रुति कलये नृनामि चरणे पश्यामि तेषां स्निग्धम् ॥४९॥

अथैवं बाणासुरमहिषीप्रार्थनाप्रतिफलं दयासागरो यदुनामरो मुरारिराह -

एवं भक्त्या किं मे देहि विभक्तः न मदाश्रयात् ।
अविष्यसि मदीया तं नैश्वर्यामुत्तिष्ठन्मे ॥५०॥
बाणासुरस्त्वं भाय्या एवं यदि राज्यान्निरन्वया ।
तदा वासस्प ते देहि समीहेव नियाभिका ॥५१॥

अथेदन्निशम्य निवृत्तवर्षातिहृषाऽनवाश्रया बाणमहिषी श्रीवासुदेवं आह
गीतेन भाषया :-

भेलहु कृतारथ तुअ पद देखि । तत्त्व विवेचन भेल विशेषि ॥
गोचर हमर सृनिअ अजरारज । एहन विचार होइछ मन आज ॥
तुअ पद-पुगल कमल बिच बास । करए हृदय तेहि पूरए आस ॥
आय न जाव असुरजन-घास । तुअ पुर जाए पुरत सब काम ॥
रत्नपाणि भन मनक विचार । हरि दरशन केरि कतए विकार ॥५२॥

इति मञ्जुलीसं श्रीरत्नपाणिनामं विरचितं तामामुपाहरणनाटिकायां बाण-
महिषीविरचनपर्यन्तं द्वितीयं प्रकरणम् ।

अथ मूलनामाभिप्रेत्य तत्पर्यवर्तिनो गीतेनृत्वं विविधे वर्तमानोऽर्थो हितवु-
ष्टयमसीत्त्वानिच्छन्नुर्ध्वकिर्मणि संपन्ने श्रीकृष्णे नारदं प्रत्युज्जगाद
"गुनेऽद्य गणकपरिवोधिने समये द्वारकां प्रति प्रज्जलमाया विशेषा, यस्यां
भवती भवोदधि" । उत्तरमाह किञ्चिद्विद्वद्भ्यः नारदाः— "हे कृष्णवशाव-
तस श्रीकृष्ण जिनप्रगणकपरिवोधनम्, तवाज्ञं सकलमङ्गलकारिणी ।
भवतु नामोद्योगः सम्प्रति साम्प्रतम् तत्" । इति निश्चयः तत्रत्याः सर्वे
एवं जनाः कृष्णदेशयन्ता मोदमानाः परस्परमुद्योगञ्चकुः । पश्येन आह
तटस्थः—

क्षिप्रिकाश्च समाधत्ता नासाकारा मनोहराः ।
अन्धान्यपि च दानाणि विविधानि समायुः ॥७०॥
सत्तमातङ्गयुवा हि पर्वता इव पर्वताः ।
कम्पयन्तो घराधारं गजस्त इव वारिदाः ॥७१॥
अश्वा भूत्यादिबलिता नानादेश—समुद्भवः ।
धारागतिविदस्त्वै गमने तु सनीयवाः ॥७२॥
अस्त्रशस्त्रवरास्त्वै पटवो हि भटादया ।
अधुरा मनुष्या माराः कृष्णोऽत्रिकमलानुगाः ॥७३॥
वदन्तो द्वारकां सर्वं कदा प्रस्थामहे वयम् ।
वन्मोहा बाणपुत्रीयं यत्प्रसादेन सत्पदम् ॥७४॥
कृष्णानुसरन्तोऽभुक्मोक्षोऽनिश्चयते यतः ।
येषां कृष्णे वैरिभावः किमभायमतः परम् ॥७५॥
यानारोहणस्याय समये समुपासता ।
अप्यराक्षिचलेखा या कृष्णं स्तोति तूष्णीं भिरा ॥७६॥

अथ गीतं भाषया :—

अप्यराक्षस्य कारणं कृष्णं पुत्रं चरण । ये बुद्धिं हनन्तु धृष्टं अनुसरण ॥
ब्रह्मादिकं सर्वं निशं दीनं । अनितरं भक्तिं संपन्नं जनुं स्त्रीनं ॥

सुनिश्चयं निवेदनं मनः दए नाशः । कहूँ उचितं सभं करव न लक्ष ॥
ऊषा सखी हमर अति प्राण । सपन विकल कहूँ कोन मति प्राण ॥
तखन गेलहुँ हम किम्बुक तीर । देखि नारद मानस भेल खीर ॥
तायसि-विद्या देल मुनि मोहि । तखन हरल तुअ नया जोहि ॥
एह एक सङ्कर कारण भेल । बाण हिमंज भए शिव-तट गेल ॥
तकरो हेतु उषा घरदान । तस फल भए भेल एतेक निधान ॥
दैवक चरित जगत के जान । एक तुअ विदित विकहुँ भगवान ॥
दीनकम्पुन करिअ मन रोष । अहिक कएल सभ की मोर दोष ॥
कल्याणकालय तुअ नाम । के जग आन पुरत भग—नाम ॥
जाएब हमहुँ दोआरका दैश । तकर कृपा कए करिअ निदेश ॥
रत्नपाणि भन मन गुनि आज । पुरब मनोरथ श्रीजगजान ॥७७॥

अर्थानुसारं कृष्ण आह । अथ दोहा :—

जकर जहन कृष्ण तहन से, जग बावए फल लोक ।
ताहि हमर को शक्य धनि, कि करह मानस लोक ॥७८॥
करह निमल मन अप्सरा, तखन बलहुँ मोहि सङ्ग ।
ये भेल से भेल समय-वश, की अब सय अनुषङ्ग ॥७९॥
युग युग जे सुर असुर जन, कएलन्हि मोहि तह गर्व ।
तकर ककर नहि कएल हम, कए सनु धए बल खर्व ॥८०॥
बाणासुर हर तरब लहि, हुनि बान्हल अनिष्ट ।
तकर कोय हम प्रकट कए, कएल हुनक सभ छुट ॥८१॥
बलओ रहओ सभ अपन रवि, मोहि कहि शत्रु क भाव ।
देख राज्य हम सुमान भए, देखि दिमान स्वभाव ॥८२॥
रतिपति-संत-तिथ हुकुम लहि, बलहुँ उचित सम्मान ।
कएल क्षमा तुअ दोष सभ, बेतस न कर मलान ॥८३॥

इति कृष्णोक्तं निवाम्य श्रीकृष्णं प्रणम्य समोदा श्रीमदुषान्तिकं जगाम ।
अपेक्षसमय एव कुम्भाण्डदुहिता कल्यकाया रामा श्रीमदुपासहचरी समाश्रय
श्रीकृष्णं स्तोति नीतेन भाषया :—

कि कहुँ हँम कृष्णक प्रभेद । के बुझ आन वेद नहि वेद ॥
 पहिलहि धएल भीम-अवतार । तखन कएल वेदक-आश ॥
 कच्छप-तनु हरि अहिजन भेल । पीठ उपर धरणी धए देल ॥
 सुकर-रूप जखन हरि भेल । दशग्री उर पर तिल सम लेल ॥
 नरहरि-तनु नए रेव मुरारि । हिरण्य-शिपु तनु देल बिदारि ॥
 वामन रूप धएल हरि जखन । बलिहि पठाओल फणिगूह तखन ॥
 परधुराम-तनु हरि धए लेल । निक्षत्री पृथिवी कए देल ॥
 दशरथ-सत सीतापात राम । दशमुख-निघन विदित भेल राम ॥
 जखन कृष्ण बडभद्रक रूप । यमुना-कर्षण कएल अनुप ॥
 जखन बएल हरि बुद्ध शरीर । दयामयागन अनुदित गौर ॥
 जखन भेल हरि करिकक वेह । नहि राखल जग मलेछच्छक रेह ॥
 दशविध तनु कएलन्हि कत काज । तखन भेल छथि श्री वृजराज ॥
 शिशुक अवस्था कत हम कहव । देव भक्ति सभ सूनितहि हरव ॥
 कि कहव महिमा अगम अपार । कृष्ण-रूप ब्रह्मक अवतार ॥
 कल्याणकर कल्याण किछु करिअ । अवला बूझि तय सभ हरिअ ॥
 सतत रहए मोहि तुअ पद ध्यान । से बर दोअ तयय भगवान ॥४६॥

इति रामाया गीतस्तुतिनिष्पन्नं श्रीकृष्ण उत्तर जगद । तथे दोहा :—

रामा तुअ मन भक्ति लखि, भेल मोहि परिवेष ।
 तुअ याचित बर देल हँम कएल जग सभ दोष ॥१॥
 शत्रुही जातिक नीच छति, की तयु मदसद्वान ।
 भेलि परमपद भक्ति तह, मोहि नहि जाति विगाम ॥२॥
 असुरवंश जनि पाए कहुँ, भक्त विभीषण भेल ।
 लङ्कापति चिरजीवित, मुक्त जनक सुख देल ॥३॥
 अविध भाष मोहि जे भणत हमहु भजिअ पुनु ताहि ।
 हमर सुदर्शन भक्त-जन, रक्षा करए सराहि ॥४॥
 समता वंश भेल जगत भरि, के कर भक्तिक योग ।
 करए जेत नहि जाए कहुँ, ककर करब नए सीम ॥५॥

अथ श्रीकृष्णोक्तनिष्पन्नं संसार मुक्तीकृतवती तत्त्वज्ञानवती रामा द्वारका
 शिवा नामधरे रथावासीति सगति निधाय सोपाधिकमुपजनाम् । ततो वार-
 दस्तमागत्य आह "हे कृष्ण की वा बिलम्ब मङ्गलपात्रासमयोऽयमतीव
 सुखर ।" कृष्णोऽप्याह "मुने भावदुक्तं युक्तं प्रतिभाति तद्धि बाणपुत्री दीप-
 सूत्रिणी मा भवतु । परन्तु विघ्ननिवारकत्वात् यथेश्वरतत्परां दुर्गतिनाश-
 कत्वाद् दुर्गतिवञ्चक पठित्वा भिक्षिकामासह्यान् प्रजनु । तदनुगास्तन्मात्रा-
 यस्तानहचर्यादयश्च गच्छन्तु ॥ ततो वरत्वा मुनिस्थां प्रति जगादेदं वरं,
 श्रुत्वेदं वरं सा श्रीगणेशतत्त्वस्वरूपगीतपाठारम्भमुच्चकार । पाठो यथा :—

जय करि-बदन मदन-रिपु-वालक नव-पालक सुरबन्धो
 रत्रि-सिन्धु-नयन शशि-बोहार सत्यत-कथना-सिन्धो ।
 मणिमण-जटित-मुकुट-कुण्डल-पुंग-मण्डितभेकरदस्तम्
 अङ्ग-कुश-कल्पलता-रद-पाशधरं प्रणमामि हसन्तम् ॥७॥
 बीजपूर-गुरित-सुण्डर-सुण्डा-दण्ड-जितारे
 अक्षय-तक्षक-सिन्दूर-विभूषित यज्ञ-गुणोदित-हारे ।
 जय मूष-ध्वज विदित-चतुर्भुज हा-वलि-मतिहीनम्
 मागनुगतमव भावभाषहारक कंकर तारक दीनम् ॥८॥
 मुनिपुत्राभिरुदितजयनीहर लम्बोदर वर-गीते
 निगमनिकरपञ्जरशुकमोदक बलितिरताशयनीते ।
 विघ्न-समस्त-तरण मुनि-मानस-मानस-सरो-मराले
 गम मतिरस्तु परं महति त्वयि सन्ततमयि युगधाले ॥९॥
 सुरमण-मोलि-जात-किण-महमयि तव पदपङ्कजमीडे
 बाहि चपलमिह मागनुगतमभि काल-भूजग-मुखनीडे ।
 रत्नपाणि-कलित-वसुपदमिह पठति समर्चनकाले
 स्तवमनुपाति स यो गणपति-पदमुन्नतभक्तिविशाले ॥१०॥

ततो दुर्गादेवचं पठति स्म :—

शूलेन बाहि नो देवि बाहि खड्गेन चाम्रिके ।
 घण्टास्वनेन नः पाहि चापजानिःस्वनेन च ॥११॥

प्राच्यां रक्ष प्रतीच्याञ्च चण्डिके रक्ष दक्षिणे ।
 भ्रातृजेनात्मसूतस्य उत स्यात्प्रथितविरि ॥८२॥
 सौम्यानि यानि ह्यवाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
 यानि चात्यर्थधोराणि तै रक्षास्मास्तैवा भुवम् ॥८३॥
 खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।
 करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्व्वतः ॥८४॥

ततः पुरोहिदादिभिर्दूर्वाक्षतं यो आग्रहाक्षिति मन्त्रेणाशायि । गुह्यो-
 मिद्विज्जतिनीराजना श्रीमधुषा शिविकामाकरोह । मङ्गलवचनो प्रवर्त्तमाने
 गीतनृत्पादपुस्तके च चन्द्रिप्रभृतिकर्तुं कस्तुतिपाठेषु ।

“शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शनिवर्णञ्चतुर्भुजम् ।
 प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्व्वविघ्नोपशान्तये ॥
 लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराभवः ।
 मेघानिन्दीवरदयामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥”

इत्यादि सकुनमन्त्रादिकं पठन्तु ब्राह्मणेषु पुरतः विविधवाद्यकारादयो
 जग्मुस्तन्तु श्रीवाणारमजा चलिता । तत्पश्चाद् नृतेयारुढाः श्रीकृष्णवल्लभप्रद-
 युम्दानिरुद्धाः प्रयाताः । ततो ब्राह्मणमाख्यो लब्धराज्यः सपरिवारो जगाम ।
 ततस्तत्पुण्यां कुलमभवदित्याह भाषामीतेन तदर्थः—

कयो नहि रहल नगर भेल शून । सुनरि सुनरि सभ कृष्णक गुन ॥
 सुत बित गृह कोन जाओत काज । चलिअ द्वारका कि करव लाज ॥
 “योपित पुष्ट केजो नहि रहल । कृष्ण - विदोग सभक मन हरल ॥
 देखव द्वारका कृष्णक घाम । विवितहि पुरत स्वर्ग-सुख काम ॥
 पशु प्राणी जत सभ चलि भेल । कृष्ण दयामय सङ्ग कए लेल ॥
 देखि बरिआत सरो भेल छबुष । सवहिक लोचन सोझा खुबुष ॥
 जतए सपीहा कृष्णक चित । तहिलन से सभ होइछ बत्त ।
 कृष्णागमन सबह छए चारि । एखन अलेख देखिअ अवधारि ॥
 रत्नपाणि भग न कर विचार । कृष्णक रचन सकल संसार ॥

इति गंगोक्तो सः— जीवेदधरात्मज श्रीरत्नपाणिशर्म प्रणीतः।मुष्ठाहरण-
 नादिकायां श्रीकृष्ण दिङ्कारकामानापर्यन्तं तृतीयं प्रकरणम् ॥

(४)

कृष्णगमनावधि द्वारकायां सर्व्वे जनाः कीदृशा अभवन्निर्वाहः । तदर्थो
 भाषामीतेन :—

रतिसुत हरण बेजाकुल सभ जन, सोसर कृष्ण विदोग ।
 निशचिन नीन भवन नहि भाषए, सभ तेजल जत भोग ॥
 देवति आदि बिकल मन सन्तत, जल बिनु मीनक प्राण ।
 कोन दिन आंखि देखव गदुनहन, तन्हि बिनु के कर प्राण ॥
 सोणितपूर दूर बहु धोजन, बलिमुत ततए नरेख ।
 रतिसुत हेतु करव गए सङ्गर, के जन कहत छदेश ॥
 कृष्ण-पराजय कतहु न सुनल, मानस नहि रह थीर ।
 लाख समारिअ रहए न धैरज, सरधित लोचन नीर ॥
 गणक बजाए सभुन जन बूझिअ, आओव कखन मुरारि ।
 दिन बिनु भागु द्वारका हरि बिनु, देखिअ सबहु विचारि ॥
 रत्नपाणि भग सुनिअ सगुन जन, न करिअ मानस छेद ।
 पहुँचव आज कृष्ण सभ मिलिकहु, से जानव मन वेद ॥११॥

अतः परं कुपी स्तौति यादवः । सहायत्वात् सुरगिरा गीतेन । गीतं यथा :—

जय जयेसविलासकारिणि प्रणतजनभयभारहारिणि,
 सजदपटुवटुखधारिणि पतिततारिणि हे ।
 तत्त्वदृष्टिविचारसारा निजसमीहितकामकारा,
 कृतश्रीकृतधरणिभाश जगदपारा हे ॥

चिस्तरिकृतं ज्ञेयं शां गमयतः किञ्चित्तराजहंसा,
 वेदवृन्दकृतप्रशंसा शमितकंसा हे ।
 निगुणासि गुणोपशालिनि सभरजितरिपुपूजमालिनि
 सकलसुरगुणिसनुजपालिनि मोहजालिनि हे ॥
 विश्ववर्णनकृतनिवासा पुरिताशिलयादवशा,
 कामरूपकृतकपाशा सर्वदासा हे ।
 स्वमसि मातः सिद्धिदात्री भक्तकामदपरमप्राप्ती,
 विरमारणकालरात्री भवविधात्री हे ॥
 स्वमसि भवसकलाभिरासा त्वत्कृपाशिलासद्वकामा,
 देहि वरमिह निरिशवामा प्रकृतिरामा हे ।
 किञ्चिदन्वदिहेतिनेहे (?) सदा वस मिथिलेशगेहे,
 जननि विवृतिशुभाविदेहे दिव्यदेहे हे ॥२॥

अथ दुर्गास्तुत्यनन्तरं कञ्चित्कालमंतराप्य द्वारकानगरप्रान्ते सर्वसेना समागत्य
 स्थिता । इतः श्रीकृष्णो गारुडं पुनिमाह :—“हे मुने ! निमतः परं विवेकम्” ।
 मुनिराह :—“हे कृष्ण सर्वैरत्र स्थेयम् । द्वारकायां सर्वैश्चाकुलाः सन्ति स्व-
 द्विगोमावतः कोणितपुरोद्भव वृत्तं सूक्ष्मरीत्या निग्राह्य चारः कश्चिद्विचारदृष्टं
 प्रेषणीयः । ततो भवद्वाचां निशम्यात्तद्वक्तव्यमित्युक्तकलेवराः सेनासामरा
 नागरा प्रादक्षास्तसर्वसमागमिष्यन्ति । यथोपार्थं सम्मिलनं विधाय नगरप्रवेशं
 उचित इति मामको विचारः” । कृष्ण आह “सुने भवद्भुक्तं युक्तमेव प्रतिभाति” ।
 अथ द्वारकायां साध्वारसकला विकलाः कृष्णसन्दर्शने विरहाधिकसिखा गोप्योऽ-
 प्युत्कण्ठिताः । देवक्यादयस्तु प्राणानुत्सृष्टकामा एव । एतस्मिन्नेव समये
 श्रीकृष्णप्रेषितश्चार आजगाम । तद्दृष्ट्वा सर्वे जगदुः “कस्त्वमत्रागतोसि” ।
 स आह “द्वारकानगरमभिधी सपरिवारः कुशलो तिष्ठति श्रीकृष्णस्तत्प्रेरित-
 तोऽहमत्रागतोसि” । इति वार्ताप्रसंगे हृषीकेशवदत्तवः सर्वमादवा-
 अभवत् । पुनस्तैः पृच्छन्—“भोभुव ! बाणासुरपुरे किञ्च समभवदिति
 श्रुत्वा” । स आह—अत्र योहा :—

शैवणासुर पुर जाए कहू, कृष्ण कएल बड़ गुड़ ।
 भेल हिभुज भए राज दए, शिवतट मानस-गुड़ ॥१६॥
 लखि खगपति सभ खरगगण, कतए किहु भए गेल ।
 हरषित रतिसुत आनि कहू, कृष्ण अछु कए लेल ॥१७॥
 नारद मुनिक विचारलहः रतिसुत कएल विवाह ।
 विधि विधिवोधिल भेल सभ, ऊषा पओलन्हि नाह ॥१८॥
 उचित धर्म हरि बूझि गन, राजा कएल विमान २ ।
 पुरवासी सभ कृष्ण-गम, कि कहव सबहुक जान ॥१९॥
 अछु चतुर्थी कर्म वश, बीति गेल दिन चारि ।
 देविअ सभ मिलि जाए कहू, हरषित जेहव मुरारि ॥२०॥

अत्र नीतं भाषया :—

शैवणाकिण मुनल सभ लोक । भेल कुशारथ बिसरल लोक ॥
 तखन तेजारी नगरक भेल । दोसर द्वारका जनि बनि गेल ॥
 अन्दन-चलिबैत जगमग खरगि ४ । कुसुम-विभूषित भए गेल खरगि ॥
 ततए पताका सभ दिश बोम । देलहत मुरपतिकी होअ लोभ ॥
 कि कहव नगरक तखनुक चरित । विशकर्म्म जनि खिरजल तवरित ॥
 सभ दिशि बाज सकल जन तखन । कृष्ण-कमल मुख देखव कखन ॥
 गज-रथ-बाज पदाति अलेख । हरप देशापित चलल अशेष ॥
 कति विधि यात तेजारी भेल । देवकि आदि अपन कए लेल ॥
 चललि कुमारी सभ नहि लाज । कृष्णकं हासुत करव गए आज ॥
 पूर्ण कलश पदकव मुख छाज । कए तिअ चललि तेजि गुरलाज ॥
 सन्ध्या समय चलल सभ साजि । जगमग बौद्धिअ मणि-गण-राजि ॥
 तखन विविध तनु बजान बाज । बन्दी सुयश गाव शुभ साज ॥
 चललि सकल जनि लय मुद बोझ । जाए पड़ल सभ कृष्णकं सोझ ॥

१—नगरद्वार पर ही कृष्णक पठाओल दूधक चति द्वारकानगरवासीक प्रति ।
 २—धीमान्, बाणक परामर्शवशा सचिव । ३—शानाकाती । ४—मार्ग ।
 ५—जनि ? स्त्री ।

उचितं विहितं हरिः सभसं मिलल । बाणासुरक चरितं सभ कहल ॥
देवकि प्रभृति उवा लम गेल । देखि तसु रूप कृतारथ भेल ॥
लषा कएल भूमिलित प्रणाम । आशिय भोटल पुरखो गतकाम ॥
बाणासुरक देखल तिस्र लोक । ककरह नहि राख्यो पति-शोक ॥
कृष्णक चरण कएल घनि शरण । देखि डारका भए गेल तरण ॥
कुशलदिक सभको भए गेल । तखन मुरारि हुकुम एह देल ॥
श्रीवसुदेव चलिअ विज गेह । देखब कलन बहुत हिअ नेह ॥

तखनभर छन्दोभर बाणाभीतमाह तटस्थः—

तखन नारद कएल सम्मत, भेल लोक तैआर ।
आगु भए भुनि चलथु सवधिक, अधिक कृष्ण विआर ॥
ताहि तैआर शगुन जत छल, आगु से सभ भेल ।
तखन बुझ दल चलल हरपित, शेष-खिर^१ दबि गेल ॥
धरणि डममग सिन्धु उछलित, भेल श्रीदश शोर ।
वृष्णिवंश-समुद्र-चन्द्रि^२, कृष्ण आगम जो^३ ॥
तखन सभ दल तगर पहु चल, सोब-शोभा देखि ।
बाणपुर जन सबहु मानल स्वर्गधाम विशेष ॥
तखन सभ गेल कृष्ण-मन्दिर, जतए जगतक वास ।
एक^४ सीध निवास पञ्चोलक, भेल पुरित आस ॥
चन्द्र मन्दिर अति अनन्दित, सपति उवा जाए ।
ततए देखल देवि दुर्गा, यादवैकसहाय ॥
तखन देखि आदि कहलन्हि, करिअ देवि प्रणाम ।
रत्नपाणि तवारि उवा, भेलि अवतति काम ॥३२॥

अथानिच्छु संहिता बाणात्मजा यादवकुलदेवहास्य-धीदुर्गाप्रणामं करोतिस्म ।

दुर्गा दुर्गासिवाशिनी वसुभूजा वा यदवोत्तासिनी
पञ्चवक्त्रैकविलासिनी पुनश्चाज्जटीवमोद्धासिनी ।

१—उदासीन, सामान्य नट । २—शेषनागक कर्णा ।

३—वृष्णिवंशकी समुद्रक चन्द्र । ४—सहल ।

मायाभोहनपाक्षिनी सुरनुता सन्नामिनी वैरिणाम्

तां त्वां देखि तमामि नाम विरसा पत्था महत्पावरात् ॥३३॥

अथान गीतं नृगिराः—

तखन चामाओन भेल सभहीनि । कि कहब हरष मिलल तथनीधि ॥
दुलहि दुलह बिभूवन अभिराम । नगहइ जाए कएल विधाम ॥
गीत नाद बीतल दिन जाति । भेलि कुनारथ जत छल तारि ॥
चङ्कोड़ी समुचित भए गेल । ओरभोर विधि गुरु-मत भेल ॥
जग-चरित सकल जन देखि । के नहि आशिय देखि विशेष ॥
सम्पति सम्पति सभयहु पूर । श्रीवृत्तकृष्ण जगत भरि चुर ॥
सकल मनोरथ पुनि गेल जलज । कृष्णक मानस राए गेल तखन ॥
करिअ सभा सभा आओन देव । श्रुतिमथ जनिअ चरण सभ शेष ॥
तखन तैआरी सभ राए गेल । धरणि मुधुमर्मा जनि बनि गेल ॥
रत्नपाणि जन अनुपम चरित । चाहथि कृष्ण होब से स्वरित ॥३३॥

इति शुभम् ॥



परिशिष्टम्

रत्नपाणिश्रुतम्

वज्रमहाविद्या-गीतम्^१

१-श्रीकालिकायाः (उपमन-कल्याण-राजे)

जग जगज्जलराजकन्ये, वरणचिन्तक जग क्षरण्ये,
निगम-तुतिमतिपाननि सन्धे सन्धयस्ये हे ॥
समसंघन रुचि-चिनुदजालि, मज्जप-सन्तत-रणकराले,
शिञ्जुकलाकर वलित भाले, रूपशाले हे ॥
दहन रवि विधू मयन शालिनि, सकल सुरमुनि मनुजपालिनि,
कर्ण अथ युग भूतजालिनि मुण्डमालिनि हे ॥
सधिर - पूरित चिकट दकने, वैरिगद्दिनि मगनवक्षने,
सप्त - निःसृत लम्बिरसने, श्रीम हसने हे ॥
भक्त पराभव अगर हारिणि, लील तनु रुचि पुष्प चारिणि,
वज्रमुण्ड विनाश कारिणि, पक्षित तारिणि हे ।
असि सिरोभय वर विमिश्रे, विजित नख रुचिपुचि सहस्रे,
दक्षित-गुरुरिष्टमदवमिश्रे, प्रणवमिश्रे हे ॥
कटि विराजित शव कराली हर हृदिस्थित मतिमराली,
पोषिणीगण वलितताली दक्षकाली हे ॥
शेखभूज शिख सुरतलीने, वाम तनु कुचयुगल पीने,
शिवमखीकृत विविध पीने, जगदधीने हे ॥

१-इस गीत संग्रह में जो गीत मैथिली में अछि । एकर प्रकाशन १९१२ ई० में बाबू ललितेश्वर सिङ्ग द्वारा सम्पादित 'मैथिलमति प्रकाश' नामक गीत संग्रह में रामेश्वर प्रेस, दरभंगा में भेल छल । (पृ० १-सँ १२ एवं १६) ।

चित्तचयाचनि विहितवासा, सरस्व-करव कुल विलासा,
निजहृत्तासकलीकृतासा, पुरितासा हे ॥

राशि शिवाश्व दुरित कोषिणि, रुद्रसिंह त्रुपेकपोषिणि,
रत्न पाणि समाधुतोषिणि, चोरपोषिणि हे ॥

२--श्रीनारायणः (हमनकल्याणरागे)

जय जगत्पद गति विचित्रे, सधन धन रुचिगत विपत्रे,
सदपमानस भव विधात्रे जीविचित्रे हे ॥

त्वमसि शारिणि परमस्वर्धा, रणक्षभीकृत शत्रु गन्धर्वा,
लम्बे कुक्षि समक्ष-सर्वा, धूमि निगन्धर्वा हे ॥

द्वीपिचर्ष मनीष बीरा, वेदवाह समरतपीरा,
भुवङ्गालिनि हस्तगभीरा, ज्वित नोरा हे ॥

पञ्चमुद्रा ललित भाला, पिङ्गलोद्य जटा विशाला,
बालरविहृत जूति कराला, क्षम्भ बाला हे ॥

सर्वविक चित्त मध्यवासा, पद समुन्नत पद विलासा,
खड्गवन्तधरा तुहासा, मञ्जुलासा हे ॥

नामकर गितकञ्जमुष्ठा, रण विगाशित चण्डमुष्ठा,
सकल मोचर निर्यवण्डा, कोपवण्डा हे ॥

जगद्व्यापि जलोद्यधारा, श्वेतपंकजवद विह्वारा,
निखिल सुरभुनि मर्त्यसारा, उग्रवारा हे ॥

रुद्रसिंहनृपानुरञ्जिनि, रत्नपाणि भवोद्यमञ्जनि,
विषय रत्नमणि नेकरञ्जिनि, शत्रु मञ्जनि हे ॥

३--श्रीविपुरमुन्दर्याः (हमनकल्याणरागे)

विपुरमुन्दरि चक्रवासा, -कलित बहुविधि भव विलासा,
शङ्खमवादि सूर्यदासा, धोत्रितासा हे ॥

विचित्र भावक रुषि परीरा, सतत शोभित इक्तपीरा,
पाल राक्षस विधु पटीरा, निर्विषपीरा हे ॥

सततदुरित - सकलकामे, वेदमन्त्रपरमाभिभागे,
त्वमसि निरदाकलयामे, शम्भुवामे हे ॥

जाशन्ति धनुरिक्ष हस्ते, सहजराजित निवि समस्ते,
मुकृति निज चरणादि शस्ते, धति प्रशस्ते हे ॥

त्वमसि सा जगद्रेकमाला, त्वत्कृपाजनिहृषिता,
हरिहरादि सृष्टीक्षिमासा जन्तनिपाता हे ॥

त्वमसि जगदाधार रूपा, निजकृपावश देव भूपा,
त्रिविध लोचनमैकयुवा, नरसरूपा हे ॥

अमुतवालदिवाकराभा, गीतकीर्तिनिकायलाभा,
सकल जगदक्षिपद्मनाभा, विधु तखाभा हे ॥

तन्त्र मन्त्र विधानदीक्षा, त्वमसि सुन्दरि सरपरीक्षा,
वेदवृषपङ्कजशिक्षा, ब्रह्मपीक्षा हे ॥

रुद्रसिंह त्रुपेकरक्षिणि, निजवशीकृत सकल दक्षिणि,
रत्नपाणि सूर्तक पक्षिणि, शत्रु भक्षिणि हे ॥

४ - श्रीभुवनेश्वर्याः

बालचित्तमणिरचिरदेहे, शशिकिरीतशुभप्रदे हे,
गुरुकुचे करुणकणेहे जयत्रिदेहे हे ॥

स्मेरमुखि भुवनेशि धन्ये स्वापिताखिल-नित्यजन्ये,
भक्तजनवरमुक्तिजन्ये शीलकन्ये हे ॥

अभय-शुणिवरपाशधारिणि, वेदवाहुविलासकारिणि,
भक्त-जन्मभयवृन्द हारिणि, दनुजदारिणि हे ॥

कमलपद गति विजित हसे कीटवीरनु शमित कंशे,
सकलदेव गणावर्तसे विदितवर्षे हे ॥

हरिहरादिक विबुधसक्ते, शुभमयी कृत विविध भक्ते,
सर्वमानस हृदयर्के, भवविरक्ते हे ॥

भवनिकाया भवसि भासा, जगु चित्तगिरीश जया,
विविध विरचित शिवकाया, तदनुवाया हे ॥

धुरकुपा मयि देवि दीने, धत्तिकादि विधान हीने,
जननि मयि करुणानदीने, तरुणि लीने हे ॥
रत्नमयि महिषाविभिरपारा, कलसपादपवद्विहारा,
जयमयी कृत भीति भारा, जगदुधारा हे ॥
रुद्रसिंह नर्पक काञ्चिनि, रत्नपाणि कृतावदालिनि,
भक्त मातम बोस धारिनि, मञ्जुमालिनि हे ॥

५--श्री भैरव्याः

उदितभानु सहस्रविम्बा, रक्तपटुपटी सुदम्बा,
भैरवी जयति प्रलम्बा, तदवलम्बा हे ॥
जपवटीमधयम्ब विद्या-मयि वरं दधतीनवद्या
रक्तलिप्ता - पयोधराद्या विरदगद्या हे ॥
वेद कर वरलोकनेत्रे, रक्तपंकजचुचिविचित्रे,
शिरसि हिमरुचि मुकुट चित्रे, दुःकृतत्रे हे ॥
कुम्भसुन्दर भवलक्ष्मी, मञ्जुहस्ता जगदलक्ष्मी,
प्रणत भव्यदशील शान्ता, सम्भू काष्ठा हे ॥
जडितमणि गण पीठ माले, ज्योतिरोच महाविशाले,
शय कानन दाव जाले, रणकराले हे ॥
वद कर युग विबुध वनिता पठति नृत्यति हसति ललिते,
सत्पुत्रो विविधा सुकविता, भूतिविदिता हे ॥
प्रणतजन दुरितपहारिणि, नव्य भव्य भवैक कारिणि,
कमल कोमल चरण चारिणि, शिव विह्वारिणि हे,
रुद्रसिंह धरैकपाले, कुरु कृपां मयि शम्भुबाले,
रत्नपाणि सुताञ्जदाले, रत्नमाले हे ॥

६--श्रीछिन्नमस्तायाः

नामसितकञ्जशानुरेपा, योनिरतिपतिरतिविशेषा,
शक्त मानसरति विशेषा, शम्भुदेवा हे ॥

तत्र विलसितनेत्रहस्ते, सूर्य कोटि शशि प्रसस्ते,
रजनिनाशितरिपुसमन्ते, छिन्नमस्ते हे ॥
हृदि सुशोभितमुण्डहारा मण्युष कृताहिसारा,
भूषणाङ्ग नरास्थिभारा विदितसारा हे ॥
भक्तकं परिधारयन्ती, स्वस्य वामकरे लसन्ती,
निजगतासृजमपि पिबन्ती, शत्रुहन्त्री हे ॥
वाकिनी वलिताभिमाना, वशिनी च विराजमाना,
वामदक्षिणयोस्समाना, रत्नपाणा हे ॥
सम्प्रसारितमञ्जुलास्या, लेलिहाना मञ्जुहास्या,
शंकरादिसुरैर्लम्भस्या, सत्प्रदास्या हे ॥
विविधपुष्पचयानुपङ्गा, सज्जितालकशोभिताया,
भूरिति कृतावभंगा, विविध गङ्गा हे ॥
रुद्रसिंहनुये सहाया भव सदा गिरि जैकजाया,
रत्नपाणिमुतामुराया, जननि माया हे ॥

७--श्रीधूमावस्थाः

जयति भगवति काकधाने, देवि धूमावति विधाने,
जयति रुक्मचतुर्धने, लम्बमाने हे ॥
मलिन चीर विशालवन्ता, सूर्यकक्षचला दुरन्ता,
दुर्मता कलहैकघाता, सुलिकाष्ठा हे ॥
रत्नमसिन्धरोद्धे सदाश्री, कृष्णरुक्मिभेकश्री,
चित्तामयभुवि वासश्री, भवविधात्री हे ॥
रुक्मदक्षय भीति भावा, विविधरिपुवनवृन्दभावा,
गिरिवादितारुहावा, दुःखभावा हे ॥
सप्तशोभितमुक्तकेशा, स्वेदपूरितहृत्पदेशा,
देवि विहरसि कामधेशा, वसुदेवा हे ॥
सदा निजवशधनवसिता, क्षुधा व्याकुलित स्वचिरा,
यदपि सुरमूनि सत्सत्ता त्वमसि तदा हे ॥

त्वत्प्रभावमयी महेशो नैव हरिरपि बहूमीशो,
जयति कोऽपि सुरोन्मरेणो यः प्रजयो हे ॥
कुह दवां मयि जननि दीने रत्नपाणि शिखावधीने,
मयिलेशदयावधीने, त्रिविधलीने हे ॥

८- श्री वगलायाः

अपि सुधीदधिमणिविकाराः, लसति वेशीनिधुविलासा
तत्र तिहासतगतासाः मोहपाशा हे ॥
लसति वगले पीतवर्णं पीतभूषण—वलिताकणं
कामसुन्दरतनुरागणं, सनीवर्णं हे ॥
त्रैरिणं परिपीडयन्ती मुद्गरम्परिधारयन्ती
स्वच्छदक्षकरे लसन्ती मोहयन्ती हे ॥
वांमकरवृत्तवेररिसने सततं राजितं पीतवसने
भूतगदाशुणिशालदशने, मञ्जुहसने हे ॥
कृतदशाकृतिसिद्धिभेदां स्वमसि देवि सतापभेषा
स्मृतिपुराणसमानवेदा, अमितसेवा हे ॥
मदनमोहनरूपशाले जननि करुणाभवविशाले
‘केश नव नव पाश जाले, भव्यबाले हे ॥
भवसि मातः सिद्धिप्रिया, स्वत्प्रसादजन्यपदा,
सूकका अपि हृदयनिद्या—स्तदनन्ददा हे ॥
देहि देहि वरं शरण्ये, रुद्रसिंहनृपेतिष्ठन्ये,
रत्नपाणिहृदेकगन्धे, भूपकन्धे हे ॥

९- श्रीमातङ्ग्याः

श्यामघनं तनुं सिंह याने, सकल सुर मुनिवोतिगाने,
भक्त सम्भव विभवदाने, भयनिधाने हे ॥

अष्टसिद्धि विराजमाने, सुरकुतार्चने मन्त्रिधाने,
माल शमाधर दीपमाने, तिष्ठमाने हे ॥
क्षेत्रमङ्कुशमणि दधाने, रत्नसिंहासनशायना,
बाधमसिमणि साविधाना गीतमाना हे ॥
रत्नभूषण पादहस्ता, लोल लोचन विबुध हासा,
मात्रकोशित पद्मिकासं, मुपकाशा हे ॥
नील नीरज अववभासा, लसति वीणावर्चविलासा,
देवि मातङ्गो ममाभा, गुदिन वत्सा हे ॥
कटक वासित वर्णरत्ना जनेशुकच्छदवचिचिभक्ता,
सकलसुरभक्तानुरक्ता, भूरि भक्ता हे ॥
दन्तुजराक्षस—नाशाधरा, रणकुशाखिल—देवरेखा,
वेतवर्ण विभक्त पक्षा पीतवक्षा हे ॥
सद्रमिहृत्पं सहाया भव सदा जगदाधिमारा,
जनानं सुररिपु सायिकाया मदनपाशा हे ॥

१०- श्री लक्ष्म्याः (दुग्धन कल्याण राशे)

जातं त्वं रुचि प्रधाना, क्षीमक्षीर विराजमाना,
पथ युगमभयवधाना, जयनिधाना हे ॥
इन्दिरा वरदासि धीरा, प्रणवस्त्रा मृष्ट नीरा,
स्वीयकरुणध्याम—कीरा सुरभीरा हे ॥
विश्वत्तारुहितमन्देशा, यक्ष शास्त्रिणि मञ्जुवेशा,
स्वत नीरद नीलकेशा नतसुरेशा हे ॥
शिवगर्जरभिचिन्त्यमाना जलजटैरमृतैरमाना
स्वर्णवेगनिमोदमाना बहुलदाना हे ॥
शिवभुजसि सम्भरणीता स्वमसि धरणीजापि सीता
कृतदशाकृतिरुक्मीता जगदघोरा हे ॥
अष्टसिद्धिनिधिप्रयाजी कामनाजयपूर्णपात्री
स्वीपनिर्मित, सकलपात्री, भवविशाली हे ॥

सप्तवारिणि ललित बोपा, सदा निजवक्ष विनुषयोपा
क्षमितवहुविध भक्त बोपा सततबोपा हे ॥
स्थिरा भव मिथिलेशमेहे किञ्चिदन्वदधीह मेहे,
रत्नपाणिहरपदे हे, शंभुदेहे हे ॥

११-श्रीकालीक

जय जगज्जननि ज्योति तुअ जगभरि, दक्षिण पदयुत नामे ।
अति द्युति पीन पयोधर उन्नत सज्जल जलद अभिरामे ॥
विकट दशन अति बदत भयानक, फुञ्जल मंजुल केशा ।
शोणितमय रसना अति लह लह, श्रीकर मस्तक देखा ॥
तीन नयन अति भीम राय तुअ, शय दुह कु डल काने ।
शय कर काटि सधन पांती कय, चौदिस कटि परिधाने ॥
मण्डमाल उर चारि भुजा तुअ, खड्ग मण्ड दुह वामे ।
दक्षिण कर वर अभय विराजित, गगन-वसन वसु यामे ॥
शिव-शय रूप दश तुअ पद युग, सदा वाम समशाने ।
फेरव रव कर चौदिस शोभित, लोमिनिगण परिधाने ॥
रत्नपाणि भन अपहव तुअ गति, के लखि सक जगमाता ।
मिथिला पतिक मनोरथ दायिनि सचकित हरिहरधाता ॥

टिप्पणी—श्रीकर=चन्द्र । भीमराव=भयानक शब्द । शय=मृतक । गगन-
वसन=दिग्भरि । वसुयामे=आठो पहर । फेरव रव=सिमारक
शब्द ।

१२-ताराक

लम्ब उदर अति लक्ष्मी भीम तनु, द्वीपि-अजिन कटि देखा ।
अस्थि चारि पद ता विध खप्पर, बाल भयानक केशा ॥
एक चरण चढ़ अरु चरण लस, से सित पङ्कज वासी ।
अति मृदु हास भास नव जीवन, लखि रुचि शुचि सम भासी ॥
दक्षिण बाहु दुह खड्ग कर्तु लस, रिपुशिर अत्पल वामे ।
शक्ति अवोम्ब भाल पर शोभित, लह-लह रसन सुकामे ॥

प्रात समय रविबिम्ब जिलोचन, तमनुर दन्त विकासे ।
उदित चित्ता चौदिस छह-धह कर, तउय देखि तुअ वासे ॥
विङ्गल जटा जूट शिर शोभित, वेदबाहु अति भीमा ।
अनुपम चरित चकित मुर नर मूर्ति, के कहि सक तुअ सीमा ॥
रत्नपाणि भन तुअ पद सेवक, तारिणि मुनु अवशेषी ।
श्रीमिथिलेशक सतत करिअ शुभ, ताहि न करिय विशेषे ॥

टिप्पणी—लक्ष्मी भोग तनु=भट्टि वा वप्रीन एवं भयानक देह । द्वीपि अजिन
=वधम्बर । अस्थि=न-कंकाल । पद=ऊपर पीठ कए पाइल ।
लस=शोभित, सित=उज्जर । शुचि=प्रच्छन्न प्रीणम् । वेद बाहु
=चारि भुजा । भीमा=भयानक ॥

१३-त्रिपुरसुन्दरीक

जय तिसु भानु अयुत तेजोमयि त्रिपुरसुन्दरी देवी ।
तीनि भवन धन्या लोहि सब कह, जकर पुरन्दर सेवी ॥
कतिविधि अतिरत आरत युति तनु, बाल कलाकर भाले ।
अहय यमन विलपित तुअ भगवति, देखि त्रिलोचन भाले ॥
सम सरवास धनुष इच्छु-वण्डक मृणि शोभित कर चारो ।
श्रीयुत चक्र विराजित तुअ पद, कमल भक्त भाव हारी ॥
आगम निगम विदित तुअ महिमा, के कहि सक अवशेषी ।
तुअ मय जगत भगत रावकारिणि, की मत करत विशेषी ॥
रत्नपाणि तुअ चरण मरोरुह, समक करिय अमिछापे ।
मिथिला पतिक सतत कह मङ्गल, कि कह्य गोचर लाखे ॥

टिप्पणी—सित भानु=बालसूर्य । अयुत=दस करोड़ । पुरन्दर=इन्द्र ।
अतिरत=सज्जित, रज्जित । आरत=आरत । कलाकर=चन्द्र ।
त्रिलोचन भाले=शिवक प्रेयसी । सरवास=बाण ओ कानो । इच्छु-
वण्डक=कुमियारक छड़ । मृणि=अंकुश ।

१४-भुवनेश्वरीक

जय भुवनेति श्रीतिमय भक्तजनि भगवति भविष्य देहा ।
 श्याम जलद अभिराम चिकुर चय, लसत भाल शशि रेहा ॥
 उदय समय रवि विभ्र अरुण छवि, नयन तीनि तुअ भासे ।
 सिरमय जड़ित किरीट विराजित, मुख सुपमा गूढ हासे ॥
 वाम उपर कर लस्य अभयवर तीच बीच कर धन्दा ।
 दहिन डार कर अंकुश तसु अय, पास भास निरि कन्दा ॥
 भूपुर भवन वसिष्ठल पोडस, ता बिच वसुदल कञ्जे ।
 ता बिच बीच उपर तुअ पद मुग, कमल ध्यान भाय भञ्जे ॥
 तुअ तनु रचन वचन गोचर नहि चकित शम्भु जगदीश ।
 भगत मनोरथवश तुअ तनु जानु वचन वेशागित ईश ॥
 रत्नपाणि भन सृतिथ समन भय, करुणा कर जगमाता ।
 पुरिय मनोरथ श्री मिथिलेशक, तुअ यश भाव निरमाता ॥

टिप्पणी—वाम उपर = वामा भागक उपरका हाथमे अभय ओ निचला हाथमे
 वरदान । तसु अय = दहिना भागक निचला हाथ मे । वसुदल—
 अष्टदल ।

१५-भैरवीक

अयुत उदित रवि रविरे देह छवि, अरुण पाट पट भासे ।
 रिपु शिर निकर माल उर घोमित, दश दिश ज्योति विकसे ॥
 रुधिर लेपमय पीन पयोधर, मुख अरविन्द समाने ।
 दशधर रत्नमुकुट शिर घोमित, मूढल हास परधाने ॥
 पुस्तक, अभय, अक्ष जवमाला, वर कर चारि निधाने ।
 निजजन शंकरि, असुर शयंकरि, श्रीशैरवि तुअ ध्याने ॥
 विषय विषम रस हृदय देविपद, भजत न धरत ने जाने ।
 भवन भवन तसु उदित शुकुति वसु, से जन भक्त पर ध्याने ॥

जगत जननि विनती कछु सुनिए रत्नपाणि भन दासे ।
 श्री मिथिलेशक हृदय थास कय, पुरिय तासु संभ आसे ॥
 टिप्पणी—अयुत = दस हजार । निकर = समूह । दशधर = दश । निजजन =
 अपन सेवकक लेल शङ्करी छवि ।

१६-छिन्नमस्ताक

जय जग ज्योति जगत गतिद'इति, चिकुर चाह रुचि भाले ।
 परम असम्भव सम्भव तअ वस, पीनपयोधर बाले ॥
 कमल कोण रविमण्डल ता बिच त्रिविध त्रिकोणक रेखा ।
 ता बिच रति विपरीत मनोभव, सुपमा सरित विशेषा ॥
 पद आरोपित पद लस ता पर, अरुण भानु शशि रेहा ।
 उरस विशाल माल रिपु-मुण्डक, कनि जपनीत सुरेहा ॥
 दक्षिण कर करवाल, वामकर, निज शिर अति विकराले ।
 लहलह रसन दशन कटकट कर, फूलल केश विशाले ॥
 निज गल गलित उपर कय रुधिरक, धार तीन बह धीरे ।
 दुद दुद योगिनि पिबेद दुअ दिश, निज मुख एक सुधीरे ॥
 रत्नपाणि निज सेवक जानिए, मानिए देवि निहोरा ।
 मिथिलापतिक सतत कर मंगल, मन धर गोचर मोरा ॥
 टिप्पणी—मनोभव = कामदेव । पद आरोपित = ताहि त्रिकोण पर चरण
 घोभैछ । माल रिपुमुण्डक = विशाल छाती पर शत्रु मुण्डक माला ।
 कनि = सायक जमेऊ । करवाल = तरवारि । निजगल = अपन
 गरदनि से बहराइत ॥

१७-धूमावतीक

जय धूमावति जगत विदित गति, श्याम रुच्छ तनु भासे ।
 फूल चिकुर निकर अति लम्बित, तनु जनु छवि अकासे ॥
 कलह-प्रेम अनुखन तोहि भगवति, अम्बर मलिन सरीरे ॥
 दशन विकट अति विशद विरल गति, स्वेद बहय तनु धीरे ॥
 क्षुचित सतत मन रुच्छ त्रिलोचन, कुक्षि सूप सन तोही ।
 तरल सुभाव दुसह मन अनुखन जन उद्वेगन मोही ॥

वायस रथ गुञ्ज देवि त्रिलोचन, वास रथय समसने ।
कण्ठखन सुन्दर अनुपम हवि धरि कण्ठखन परम भवने ॥
रत्नपाणि भन रहिय मुदित मन, निज सेवक मोहि जानी ।
सदा करिय मिथिलेशक मंगल, गोचर सुनिय भवानी ॥

टिप्पणी—चिकुर निकर=केशसमूह । रथैव=चाम । वायस रथ=रथक
ऊपर में जोड़ा ।

१--बगलामुखीक

जय बगलामुखि अमृत-सिन्धु बिच मणिमण्डप निधिदेवी ।
ता बिच रत्नसिंहासन ऊपर, तुअ पद लस भवभेदी ॥
पीतवसन तुअ पीत विभूषण पीत कुसुममय माला ।
फूल चिकुर निकर दुइ लोचन दुइमोचनि हरवाला ॥
वाम हाथ रिपुरसन रक्तमय, दहिन यदा अभिरामा ।
अनुगत जन जयकारिनि सुररिपु, मदिनि पूरत कामा ॥
कुण्डल-लसित गण्डमण्डल युग, चण्डभानु युग जोती ।
विपति विदारिनि रिपुमय हारिनि, दन्त विराजित मोती ॥
श्री मिथिलेशक कर जय देवी, पूरित कर सभ आसे ।
रत्नपाणि गोचर कर भगवति, कर मम हृदय निवासे ॥

टिप्पणी—रिपुरसन=शत्रु क जीह । चण्डभानुयुग=दू गोटे प्रचण्ड सूर्यक
समान ज्योति वाली ।

१६--मातंगीक

कीरक सम हवि श्याम सुतनु लस, माजिक भूपित देहा ।
शिशु शशि माल, माल मुक्तामणि, हासमुखी शुभगेहा ॥
निज पद धिनत विभव वरदाइति, तीनि नयन गुञ्ज भासे ।
सूर मुनि आदि सकल जनसेवित चरण विजित पदबासे ॥
कटुक सुवास पान आरत मुख, कर कर राजय बीना ।
अष्ट सिद्धि मयि सिद्धि श्वरणा, मातंगी जसु नामे ॥

मिथिलापतिक पुरिय अभिलाषा, निज पदनत अवलम्बे ।
रत्नपाणि गुञ्ज पदयुग सेवक, गोचर कर जगदम्बे ॥
टिप्पणी—कीर=सूग्गा । कटुक सुवास=लवंगक सुगन्धियुक्त पान खएला
सँ लाल मुँह कएने ।

२०--महालक्ष्मीक

जय कमला कमलायत लोचनि, भव भयमोचनि कन्द्या ।
घन हवि कुच, चामीकर तनुहचि, चारि भूजा अति छन्द्या ॥
चाह किरीट विराजित मस्तक, धारिनि पाटक चीरे ।
लयय वराभय कर दुई दुइ, पथ युगल तसु चीरे ॥
चारि कनक घट भरल सुधा रस, अमरित गजकर लाए ।
वाम दहिन भय सिञ्चित कर मुख, कमल मनोहर जाए ॥
मणिमण ज दंत लसित भूषण तनु, कशना कर जगमाता ।
शंकर किकर इन्द्र आदि सुर, सेवक जनिक विद्याता ॥
पंकज आसन परम विकासन, ताहि उपर लस देवी ।
रत्नपाणि तसु ध्यान मगन मन, श्री मिथिलेशक सेवी ॥

टिप्पणी—कमलायत=कमलक पत्तीसनक समान आँख वाली । घनहवि=
रत्न मेघक समान । चामीकर=सोनाक समान देह । चाह=
सुन्दर । लयय=शोभय । वराभय=दुइ हाथ मे वर ओ अभय
तथा दुइ हाथ मे दुइ कमल । गज कर=हाथी सूँठ मे अमृत भरि
वामा ओ दहिना भाग सँ देवीक मुँह मे ढारैत अछि । शंकर
किकर=शिव इन्द्र आदि देवता सेवक छथि ।

२१--महासरस्वतीक (राग विहांग)

दनुज दलनि दुर्गे भयहारिनि, जय पूरित मन कामे ।
शुभ निशुभ निपुननि भगवति, महासरस्वति नामे ॥
घनहवि केश भेय अति शोभित, आनन आनन्द कन्द्या ।
तीनि नयन छवि अतिहि विराजित, भाल बालतनु चन्द्या ॥

झूल, झंख रथ-अंग, बाण तुझ, बहिन भाग करचारी ।
 घण्टा, हल, पुनु मुसल, सरासन, धाम भाग कर चारी ॥
 अनुगत शंकरि, असुर भयंकरि, सारद ससि सम देहा ।
 बाहून सिंह लसय तुझ अनुपम, निज जन परम सिनेहा ॥
 रत्नपाणि करपुट कय नाचयि, सुनिय देवि मन लाई ।
 मिथिला पुरके पुरिय मनोरथ, निसदिन रहिय सहाई ॥

टिप्पणी—महासरस्वती = शुभमदिनी दुर्गा । बालतनु = छोटा देहवाला ।
 अनुगत = शरणागतक लेल शंकरी ॥

२२--शृंगारक गीत (राग-महलार)

सकल शृंगार सुभग घुम वेशा, नृपगृहि देवि कएल परवेशा ॥
 दिन दिन मंगल कारिणि धन्वा, सिंह चहुलि राजए निरिक्म्या ॥
 शारद - चन्द्रमुखि चय देहा, कृपा बिलोकनि भक्त सिनेहा ॥
 क्षमा करिअ निज जन अपराधे, विश्रुवन तारिणि शील अगाधे ॥
 रत्नपाणि कर गोचर आजै, सतत परिय मिथिलेशक काजे ॥

२३--आरतीक गीत (राग-हमीर)

सुभ आइति जगदम्ब तिहारी, देवि सगूह गिरिराजकुमारी ॥
 दीपक दीप पंचमुख धारी, ता मँह धृत कपूर सम्हारी ॥
 नीराजन मन करत बिचारी, प्रात समय अतिसय सुखकारी ॥
 शिव विरञ्चि सनकादि मुरारी, कर आइति तुअ जगत बिचारी ॥
 रत्नपाणि फल चाहत चारी, देहु जननि फल अति सुभकारी ॥

